CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

नीतिसंग्रहस्य मित्रलाभरहस्यम्

सम्पादक :

डॉ० बैजनाथ मिश्रः

एम ए०, पी-एच० डी०, आचार्यः

प्रकाशक :

भारतीय विद्या प्रकाशन

वाराणसी दिल्ली

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

© भारतीय विद्या प्रकाशन
CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri
१—पोस्ट बाक्स नं० ११०८ कचौड़ी गली, वाराणसी–२२१००१
२—१, यू० बी० बँगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली–११०००७

अन्य प्राप्ति स्थान :

भारतीय बुक कारपोरेशन

१, यू० बी० बँगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली–११०००७

मूल्य—१०-००

प्रथम संस्करण—१९९०

छात्रों की सुविधा के लिए अन्य पथ प्रदर्शकों तथा प्रश्नोत्तरियों का भी प्रकाशन किया गया है। प्रत्येक वर्ष की भाँति इस वर्ष भी छात्र परीक्षा में सफलता के लिए **भारतीय विद्या प्रकाशन** की **विद्या गाइडों** का ही चयन करें।

मुद्रक—
राज प्रेस
पाटन दरवाजा (गायघाट), वाराणसी।
Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

अनुक्रमणिका

क्रम संख्या — पृष्ठ-संख्या

हिन्दी-भाषायाम्

१.	विषय विमर्श	१
२.	हितोपदेश का कथा मुख	४
३.	हितोपदेश का मित्र लाभ	५
४.	लघुपतनक नामक कौवे की कथा	५
५.	वृद्ध व्याघ्र तथा लोभी पथिक की कथा	६
६.	मृग-शृगाल की कथा	९
७.	वृद्ध जरद्गव गृध्र-विडाल की कथा	१०
८.	मूषक-परिव्राजक की कथा	१५
९.	हस्ति-धूर्त शृगाल की कथा	१८

संस्कृत-भाषायाम्

१०.	हितोपदेशस्य कथामुखः	२१
११.	हितोपदेशस्य मित्रलाभः	२२
१२	लघुपतनककाकस्य कथा	२३
१३.	वृद्धव्याघ्र-लुब्धपथिकस्य कथा	२४
१४.	मृग-शृगालस्य कथा	३७
१५.	वृद्धजरद्गवगृध्र-विडालस्य कथा	३९
१६.	मूषक-परिव्राजकस्य कथा	५१
१७.	हस्ति-धूर्तशृगालस्य कथा	५७

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

श्लोकानुक्रमणिका

क्रम	श्लोक	पृ० सं०	क्रम	श्लोक	पृ० सं०
१.	अजातकुल शीलस्य	३९	२०.	धनवान्बलवान्	५२
२.	अनिष्टादिष्टलाभे	२५	२१.	न गणस्याग्रतो गच्छेत्	३०
३	अयं निजः परो वेति	४३	२२.	न धर्मशास्त्रं पठतीति	२७
४.	अर्थनाशं मनस्तापम्	५३	२३.	न संजयमनारुह्य	२५
५.	अल्पानामपि वस्तूनाम्	३१	२४.	नदीनां शस्त्रपाणिनाम्	२७
६.	असम्भवं हेममृगस्य	२९	२५.	परोक्षे कार्यहन्तारम्	४६
७.	अहिंसा परमो धर्मः	४२	२६.	माता मित्रं पिता चेति	३२
८.	आपदर्थे धनं रक्षेत्	३४	२७.	मित्रं प्राप्नुत सज्जनाः	६०
९.	आपत्सु मित्रं जानीयात्	४५	२८.	यस्यार्थास्तस्य मित्राणि	५२
१०.	उपायेन हि यच्छक्यम्	५६	२९.	यस्मिन् देशे न सम्मानम्	५०
११.	एकस्य दुःखस्य न	५८	३०.	यानि कानि च मित्राणि	३६
१२.	औरसं कृतसम्बन्धम्	५५	३१.	यो ध्रुवाणि परित्यज्य	६०
१३.	काव्यशास्त्रविनोदेन	२२	३२.	विपदि धैर्यमथाभ्युदये	३१
१४.	चलत्येकेन पादेन	४९	३३.	शङ्काभिः सर्वमाक्रान्तम्	२९
१५.	जातिमात्रेण	४१	३४.	शशिदिवाकरयोः	३६
१६.	तानीन्द्रियाण्यविकलानि	५३	३५.	सहसा विदधीत न	२८
१७.	तावद् भयस्य भेतव्यम्	४०	३६.	स हि गगनविहारी	२८
१८.	तृणानि भूमिरुदकम्	४१	३७.	सम्पदि यस्य न हर्षः	३१
१९.	धनानि जीवितञ्चैव	३५	३८.	सुहृदां हितकामानाम्	४६

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

नीतिसंग्रहस्य मित्रलाभरहस्यम्

विषय विमर्श

नीति का महत्व

नीति का विषय कितना रुचिकर एवं उपादेय है, यह किसी भी सहृदय व्यक्ति से छिपा नहीं है, पर यह जलाशय के समान गम्भीर और अगम भी है, जिससे इसमें से नीति रत्नों को निकालना सुगम नहीं, प्रत्युत बड़ा ही विषय है, फिर भी महाकवि भारवि के शब्दों में विषम होते हुए भी सदुपदेष्टा द्वारा प्रदर्शित मार्ग या सतत अभ्यास से नीति महोदधि में प्रवेश करके नीति रत्नों को उसी प्रकार प्राप्त किया जा सकता है, जिस प्रकार जलाशय में किसी के द्वारा निर्मित सोपानों या सतत अभ्यास के द्वारा प्रवेश कर रत्नों को ग्रहण किया जा सकता है—

विषमोऽपि विगाह्यते नयः कृततीर्थः पयसमिवाशयः ।

नीति की परिभाषा

नीति शब्द संस्कृत के णीञ् प्रापणे धातु से क्तिन् प्रत्यय के संयोग से निष्पन्न हैं, जिसका अर्थ है ले जाने की रीति या पद्धति, परन्तु यह नीति शब्द का व्युत्पत्ति जन्य सीमित अर्थ है। इसके अतिरिक्त इसका एक व्यापक अर्थ भी है, जो नीति ग्रन्थों एवं शब्दकोशों में अंकित है।

नीति ग्रन्थों में नीति शब्द का अथ

नीति के प्रधान आचार्य शुक्राचार्य तथा कामन्दक ने 'नयन' अर्थात् सम्यक रीति से सुमार्ग पर ले जाने की क्रिया को नीति कहा है—

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

नयनान्नीतिरुच्यते ।

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

या द्विवेदी ने अपनी 'नीति मञ्जरी' में कर्त्तव्य एवं अकर्त्तव्य को निश्चित करने वाली रीति को नीति कहा है, क्योंकि इसके ज्ञान से धर्म में रति और अधर्म में विरति होती है—

एवं कर्त्तव्यमेवं न कर्त्तव्यमित्यात्मको यो धर्मः सा नीतिः ।
इमां ज्ञात्वा धर्मे रतिरधर्मे विरतिर्भवति ॥

संस्कृत शब्द कोशों में नीति शब्द का अर्थ

संस्कृत के प्रायः सभी शब्द कोशों में नीति शब्द का व्युत्पत्ति जन्य अर्थ और उदाहरण के लिए नीति के श्लोक संग्रहीत हैं। यथा-शब्दकल्पद्रुम—

नीयन्ते संलभ्यन्ते उपायादयः ऐहिकामुष्मिकार्था वाऽस्यामनया वा। नी + अधिकरणे करणे वा क्तिन् इति नीतिः। तात्पर्य यह है कि उपायादि तथा ऐहिक-पारलौकिक अर्थ, जिसमें या जिसके द्वारा प्राप्त किये जाते हैं, उसे नीति कहते हैं।

इन समस्त परिभाषाओं पर दृष्टिपात करते हुए शास्त्रीय आधार पर नीति की एक समुचित परिभाषा बनाई जा सकती है-

महापुरुषों (श्रेष्ठ जनों) के जिस चारित्रिक व्यवहार के अनुकरण से लोक में मनुष्य का अभ्युदय और कल्याण हो, वह नीति है।

नीति की उपयोगिता

आचार्य शुक्र ने नीति को मानव जीवन के लिए बहुत ही उपयोगी कहा हैं। नीति शास्त्र, धर्म अर्थ एवं काम का मूल कारण तथा मोक्ष का दाता है। यह सर्व जगत् का उपकारक तथा मर्यादा पालक है। सम्पूर्ण लोक के व्यवहार की स्थिति नीति के विना उसी प्रकार असम्भव है, जिस प्रकार भोजन के विना देहधारियों के शरीर की स्थिति—

सर्वोपजीविकं लोकस्थितिकृन्नीतिशास्त्रकम् ।
धर्मार्थकामं मूलं हि स्मृतं मोक्षप्रदं यतः ॥
सर्वलोकव्यवहारस्थितिर्नीत्या विना ।
यथाशनैर्विना देहस्थितिर्न स्याद्धि देहिनाम् ॥

Sri Vidyabharati Book Centre, Sahijari

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

कि बहुना, जो मनुष्य नीतिशास्त्र का अध्ययन करता तथा श्रवण करता है, वह देवेन्द्र से भी पराभव को प्राप्त नहीं होता—

अधीते नीतिशास्त्र यः, शृणोति च सदा नरः ।
न पराभवमाप्नोति, शक्रादपि कदाचन ।।

मित्रलाभ का वैशिष्ट्य

नीति कृतियों की परम्परा में विष्णु शर्मा कृत 'हितोपदेश' का महत्व पूर्ण स्थान है। इन्होंने 'पञ्चतन्त्र तथा अन्य नीति ग्रन्थों से कथा तथा नीति श्लोकों को लेकर इस कृति की रचना की है, जिसमें चार प्रकरण हैं—

मित्रलाभः सुहृद्भेदो विग्रहः सन्धिरेव च ।
पञ्चतन्त्रात्तथान्यस्माद् ग्रन्थादाकृष्य लिख्यते ।।

यह कृति अत्यन्त लोक प्रिय तथा लोक विश्रुत है।

प्रस्तुत पुस्तक में केवल 'मित्रलाभ पर प्रकाश डाला गया है, जो संस्कृत के प्राथमिक सुकुमार मति छात्रों के लिए परम उपयोगी है। आशा है कि छात्र इससे विशेष लाभान्वित होंगे।

बैजनाथ मिश्र

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

प्रस्ताविका

भागीरथी के तट पर पाटलीपुत्र (पटना) नामक नगर है, जहाँ सर्वगुण सम्पन्न सुदर्शन नामक राजा था। एक दिन राजा ने किसी के द्वारा पठित दो श्लोक सुने—

अनेक संशयोच्छेदि परोक्षार्थस्य दर्शकम्।
सर्वस्प लोचनं शास्त्रं यस्य नास्त्यन्ध एव सः॥

× × ×

यौवनं धनसम्पत्तिः प्रमुत्वमविवेकिता।
एकैकमप्यनर्थाय किमुत यत्र चतुष्टयम्॥

इन श्लोकों को सुनकर वह राजा अपने शास्त्र विमुख तथा नित्य कुमार्ग-गामी पुत्रों को देखकर बहुत उद्विग्न हुआ और चिन्ता करने लगा कि ऐसे पुत्रों से क्या लाभ? जो न विद्वान् हों, न धार्मिक। मूर्ख तथा अधार्मिक पुत्रों से तो पुत्रों का उत्पन्न न होना ही अच्छा है, क्योंकि ऐसे पुत्र तो सदैव दुःख ही देते रहते हैं।

इस प्रकार विचार कर राजा ने पण्डितों की एक सभा की। उन्होंने कहा कि हे विद्वद् वृन्द, आप लोगो में कोई ऐसा विद्वान् है, जो शास्त्र विमुख तथा कुमार्गगामी मेरे पुत्रों को नीति शास्त्र की शिक्षा देकर उन्हें विद्वान् तथा धार्मिक बना दे। राजा की बात सुनकर नीति शास्त्र विशारद बृहस्पति के समान महापण्डित विष्णुशर्मा ने कहा कि हे राजन्, मैं आपके पुत्रों को नीति शास्त्र का उपदेश देने को प्रस्तुत हूँ। मैं इस पण्डित सभा के बीच दृढ़ प्रतिज्ञा करता हूँ कि 'छः मास के भीतर मैं आपके पुत्रों को नीति शास्त्र का ज्ञाता बना दूँगा। पण्डितराज विष्णु शर्मा की प्रतिज्ञा सुन कर राजा ने उनकी बड़ी ही प्रशंसा की और नीति शास्त्र सीखने के लिए उन्हें अपने पुत्रों को समर्पित कर दिए।

CC-O. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

मित्रलाभ

एक दिन राजभवन की अट्टालिका पर आनन्द पूर्वक बैठे हुए राजपुत्रों के समक्ष पण्डित राज विष्णु शर्मा ने कहा कि हे राजपुत्रो, सुनो—

बुद्धिमानों का समय काव्य शास्त्र की चर्चा करते हुए आनन्दपूर्वक व्यतीत होता है और मूर्खो का समय दुर्व्यसन, निद्रा या कलह के द्वारा व्यतीत होता है। अतः आप लोगो के विनोद के लिए मैं कौवा तथा कच्छप आदि की विचित्र कथा कहता हूँ।

यह सुनकर राजपुत्रो ने कहा—कहिए।

पण्डितराज विष्णु शर्मा ने कहा-सुनो इस समय मैं मित्रलाभ प्रस्तुत कर रहा हूँ, जिसका यह प्रथम श्लोक है—

असाधनाः वित्तहीनाः वुद्धिमन्तः सुहृत्तमाः।
साधयन्त्याशु कार्याणि काककूर्ममृगाखुवत्॥

सभी प्रकार के साधनों से रहित तथा धन हीन होते हुए भी अच्छे मित्रों वाले वुद्धिमान् अपने कार्यों को शीघ्रता से इस प्रकार सिद्ध कर लेते हैं, जिस प्रकार कौवा, कछुवा, मृग तथा चूहे ने सिद्ध किया।

यह सुनकर राजपुत्रों ने पण्डित राज विष्णु शर्मा से पूछा कि यह कैसे? पण्डितराज ने कथा प्रारम्भ की।

लघुपतनक नामक कौवे की कथा

गोदावरी नदी के तट पर एक बहुत बड़ा सेमल का वृक्ष है, उसपर अनेक दिशाओं तथा देशों से आकर पक्षिगण रात्रि में विश्राम करते हैं। एक दिन रात्रि व्यतीत होने पर जब कुमुदिनी नायक भगवान् चन्द्र अस्त हो रहे थे, उसी समय लघुपतनक नामक कौवे ने द्वितीय यमराज के समान आते हुए एक व्याध को देखा और मन में सोचने लगा कि आज प्रातःकाल ही अशुभ दर्शन हुआ, पता नहीं क्या अनिष्ट होगा?

ऐसा कहकर वह कौवा व्याकुल होकर उस व्याध के पीछे-पीछे चला।

Sri Vijayendra Saraswathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

तदनन्तर वह व्याध चावल के कणों को फैलाकर उस पर जाल बिछाकर छिप गया। उसी समय अपने परिवार के साथ आकाश में उड़ते हुए कपोत राज चित्रग्रीव ने फैले हुए चावल के कणों को देखा और चावल कणों के लोभी अपने उन कपोतों से कहा—'इस निर्जन वन में चावल के कणों का होना कैसे सम्भव है? विचार करना चाहिए। मैं यहाँ कल्याण नहीं देखता हूँ। मेरे मन में अनिष्ट की शंका उत्पन्न हो रही है, क्योंकि सन्दिग्ध कार्य में प्रवृत्त होना कल्याणकारक नहीं होता। अतः चावल के कणों के लोभ में हम लोग भी वैसे ही न हो जायँ, जैसे कंकण के लोभ से पथिक—

कङ्कणस्य तु लोभेन मग्नः पङ्के सुदुस्तरे।
वृद्धव्याघ्रेण सम्प्राप्तः पथिकः स मृतो यथा॥

यह सुनकर कपोतों ने पूछा—यह कैसे?

कपोतराज ने कहा—सुनो।

वृद्ध व्याघ्र तथा लोभी पथिक की कथा

एक दिन दक्षिण के वन में घूमता हुआ मैंने देखा कि एक वृद्ध व्याघ्र स्नान करके हाथ में कुश लेकर तालाब के किनारे कहता था कि 'ऐ पथिकों, यह सोने का कङ्कण ग्रहण करो।'

तत्पश्चात् एक लोभी पथिक ने सोचा कि यह भाग्य से ही होता है। अतः उस वृद्ध व्याघ्र से पूछा कि 'तुम्हारा कङ्कण कहाँ है?'

पथिक की बात सुनकर व्याघ्र ने कङ्कण दिखा दिया।

लोभी पथिक ने कहा—'हिंसात्मक प्रवृत्ति वाले में मैं कैसे विश्वास करूँ?

यह सुनकर वृद्ध व्याघ्र ने कहा—पथिक, तुम मेरी बात सुनो। मैं पहले जवानी की अवस्था में बहुत ही दुर्वृत्त था। अनेक गायों तथा मनुष्यों के वध से मेरे पुत्र और मेरी स्त्री सभी मर गये; जिससे मैं वंशहीन हो गया। तत्पश्चात् एक धर्मात्मा ने मुझे उपदेश दिया कि 'आप दान-धर्मादि करें।

उसी उपदेश से मैं अब वृद्धावस्था में शिथिल नख-दन्त वाला, स्नानशील तथा दाता बन गया हूँ। क्या मैं अब भी विश्वासपात्र नहीं हूँ? अतः अब सरोवर में स्नान करके स्वर्ण कङ्कण को ग्रहण करो।

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

तत्पश्चात् वह लोभी पथिक व्याघ्र के वचनों में विश्वास करके तालाब में ज्योंही स्नान करने गया, उस महा पंक में फँस गया और वहाँ से बाहर निकलने में असमर्थ हो गया। तदनन्तर उस लोभी पथिक को पंक में फँसा हुआ देखकर उस व्याघ्र ने कहा—'अरे, तुम तो महापंक में फँस गये हो। अतः मैं तुम्हें निकालता हूँ।'

इस प्रकार कहकर वह वृद्ध व्याघ्र धीरे-धीरे उस लोभी पथिक के निकट पहुँच गया और उसे मारकर खा गया। अतः बिना सोचे समझे कोई कार्य नहीं करना चाहिए—

सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमापदां पदम्।

कपोतराज चित्रग्रीव के इस वचन को सुनकर किसी कपोत ने अहंकार पूर्वक कहा—'आप ऐसा क्यों करते हैं?'

शङ्काभिः सर्वमाक्रान्तमन्नं पानञ्च भूतले।
प्रवृत्तिः कुत्र कर्त्तव्या? जीवितव्यं कथं नु वा॥

अतः भोजन के विषय में किसी प्रकार का विचार नहीं करना चाहिए।

यह वचन सुनते ही सभी लोभी कपोत वहाँ जाल पर बैठ गये और उस जाल में फँस गये। तदनन्तर जिस अभिमानी कपोत के कथनानुसार वे वहाँ आये थे, वे सभी उसका तिरस्कार करने लगे।

इस प्रकार अन्य कपोतों के द्वारा उस अभिमानी कपोत का तिरस्कार देखकर कपोत राज चित्रग्रीव ने कहा कि इसका इसमें कोई दोष नहीं है, क्योंकि जब कोई विपत्ति आने वाली होती है, तब अपने हितैषी भी उसके कारण बन जाते हैं। अतः घबड़ाने की कोई आवश्यकता नहीं। विपत्ति के समय घबड़ाना कायरों का लक्षण है। अतः धैर्य पूर्वक इस जाल से छूटने का उपाय सोचना चाहिए। इस समय सभी मिलकर ऐसा करें कि इस जाल को लेकर उड़ जायँ।

ऐसा सोचकर सभी पक्षी एकता के महत्व को ध्यान में रखते हुए एक मत होकर एक ही साथ उस जाल को लेकर उड़ गये। यह देखकर वह व्याध निराश होकर वहाँ से चला गया।

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

तदनन्तर व्याध को निवृत्त देखकर कपोतों ने कहा कि 'अब इस समय क्या करना चाहिए ?'

यह सुनकर कपोतराज चित्र ग्रीव ने कहा कि माता-पिता तथा मित्र ये तीनों स्वभाव से ही हितकारी होते हैं। अतः हम लोग अपने मित्र चूहों का राजा हिरण्यक के निकट चलें, जो गण्डकी नदी के किनारे चित्रवन में रहता है, वह हमारे जाल के बन्धन को काटकर हमें मुक्त करेगा।

इस प्रकार विचार करके सभी हिरण्यक के बिल के समीप गये। वह मूषक सदैव अनिष्ट की आशंका से बिल के सौ द्वार बनाकर उसमें निवास करता था। वह जाल में बँधे अपने मित्र चित्रग्रीव तथा अन्य कपोतों को देखकर आश्चर्य चकित होकर पूछा—'मित्र, यह क्या ?'

कपोत राज चित्रग्रीव ने कहा—'मित्र, यह हमारे पूर्व जन्म के कर्मों का फल है—

अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्।

अपने मित्र चित्रग्रीव की बातों को सुनकार हिरण्यक ने उन्हें सान्त्वना देते हुए कहा कि मित्र, जिस प्रकार आप लोगों ने एकता अपनाई और उसी के प्रभाव से इस विपत्ति को पार करके मेरा स्थान प्राप्त किया, उसी प्रकार एकता को सदैव बनाये रखें, एकता को कभी न छोड़े। यह एकता ही सर्वाङ्गीण कल्याण कारिणी है।

इस प्रकार कहकर वह हिरण्यक अपने मित्र चित्रग्रीव के जाल को काटने के लिए शीघ्रता पूर्वक उसके निकट गया। यह देखकर चित्रग्रीव ने कहा—'मित्र, ऐसा न करो। सर्व प्रथम मेरे आश्रित इन कपोतों का जाल काटो, तत्पश्चात् मेरा बन्धन काटना।'

अपने मित्र की बात सुनकर हिरण्यक ने कहा कि—मैं अल्प शक्ति हूँ। दाँत भी कोमल हैं। अतः मैं इनके बन्धन काटने में असमर्थ हूँ।

मित्र हिरण्यक की बात सुनकर कपोतराज चित्रग्रीव ने कहा कि मित्र, मैं अपने आश्रितों का रक्षण करने में सर्वथा असमर्थ हूँ। अतः पहले इनका ही बन्धन काटो।

CC-O. Vidyabhandar Trust Collection. Digitized by eGangotri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

अपने मित्र की बात सुनकर हिरण्यक बहुत ही प्रसन्न हुआ और कहा कि 'मित्र, तुम धन्य हो। आश्रितों के प्रति वात्सल्य के कारण तुम तीनों लोकों के राजा बनने में समर्थ हो।'

तत्पश्चात् हिरण्यक ने सभी के बन्धनों को काट दिये, जिससे बन्धन मुक्त होकर प्रसन्न चित्त कपोत राज चित्रग्रीव अपने कपोत परिवार के साथ अभीष्ट देश को चला गया और हिरण्यक अपने बिल में।

अतः सभी को अपने लिए मित्र बनाना चाहिए। देखो—एक मित्र ने अनेक कपोतों को बन्धन मुक्त कर दिया—

यानि कानि च मित्राणि कर्त्तव्यानि शतानि च।
पश्य मूषक मित्रेण कपोताः मुक्तबन्धनाः॥

तदनन्तर इस घटना का प्रत्यक्षदर्शी लघुपतनक नामक कौवा, हिरण्यक नामक मूषक के निकट जाकर आश्चर्य पूर्वक बोला—हिरण्यक, तुम सर्वथा प्रशंसनीय तथा मित्रता के योग्य हो। अतः मैं भी तुम्हारे साथ मैत्री करना चाहता हूँ।

लघुपतनक की बात सुनकर बिल के भीतर से ही हिरण्यक ने कहा कि 'तुम कौन हो?'

उसने कहा कि 'मैं लघुपतनक नामक कौवा हूँ।'

हिरण्यक ने हँसकर कहा—तुम्हारे साथ मित्रता कैसी? क्योंकि भक्ष्य और भक्षक की मित्रता विपत्ति का कारण होती है, जैसे शृगाल के कारण जाल में फँसे हुए उस मृग की कौवे ने रक्षा की—

भक्ष्यभक्षकयोः प्रीतिर्विपत्तेरेव कारणम्।
शृगालात्पाशबद्धोऽसौ मृगः काकेन रक्षितः॥

लघुपतनक ने पूछा—यह कैसे?

हिरण्यक ने कहा—सुनो।

मृग-शृगाल की कथा

मगध देश में चम्पकवती नामक एक विशाल वन है, उसमें बहुत समय से अत्यन्त स्नेहपूर्वक मृग और कौवा निवास करते थे। किसी समय एक

Sri Vidyabharathi Book Centre, Srirangam

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

शृगाल ने स्वेच्छापूर्वक विचरण करने वाले उस हृष्ट-पुष्ट मृग को देखा और अपने मन में सोचा कि इसका सुन्दर मांस किस प्रकार खाऊँगा ? अच्छा, सर्वप्रथम मैं उसे अपना विश्वास उत्पन्न कराऊँ। ऐसा सोचकर वह शृगाल उस मृग के निकट जाकर बोला—'मित्र, तुम सकुशल हो ?'

मृग ने कहा—तुम कौन हो ?

शृगाल ने कहा—मैं क्षुद्र बुद्धि नामक शृगाल हूँ। इस वन में बन्धुहीन मैं मृतकवत् निवास करता हूँ। इस समय मैं तुम्हें मित्र रूप में पाकर बन्धु युक्त हो गया हूँ। अब मैं तुम्हारा अनुचर बनकर रहूँगा।

शृगाल की बात सुनकर मृग ने कहा—ऐसा ही होवे।

तत्पश्चात् भगवान् सूर्य के अस्त होने पर वे दोनों मृग के निवास स्थान पर गये, जहाँ चम्पा की शाखा पर मृग का प्राचीन मित्र सुबुद्धि नामक कौवा रहता था। उन दोनों को देखकर उसने पूछा—मित्र चित्राङ्ग, यह दूसरा कौन है ?

मृग ने कहा—यह शृगाल है। मुझसे मित्रता की इच्छा से आया है।

कौवे ने कहा—मित्र, कुल और शील जाने बिना अचानक आगन्तुक के साथ मित्रता उचित नहीं है, क्योंकि कहा गया है—

अज्ञातकुलशीलस्य वासो देयो न कस्यचित्।
मार्जारस्य हि दोषेण हतो गृध्रो जरद्गवः॥

मृग और शृगाल दोनों ने पूछा—यह कैसे ?

कौवे ने कहा—सुनो।

वृद्ध जरद्गव गृध्र-विडाल की कथा

गंगा के तट पर गृध्रकूट नामक पर्वत पर बहुत बड़ा पाकड़ का वृक्ष है। उसके कोटर में दुर्भाग्यवश जरद्गव नामक वृद्ध गृध्र रहता था। वह अपना आहार उपार्जन करने में असमर्थ था। अतः उस वृक्ष पर निवास करने वाले अन्य पक्षी उसके ऊपर कृपा करके अपने अपने आहार में से थोड़ा-थोड़ा निकालकर उसे जीवनार्थ देते थे और वह उनके बच्चों की रक्षा करता था।

CC-O. In Public Domain. Digitized by Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

क दिन दीर्घकर्ण नामक विडाल, पक्षियों के बच्चों को खाने के लिए वहाँ या, जिसे देखकर भयभीत बच्चों ने कोलाहल किया। यह सुनकर वृद्ध रद्गव ने कहा—'यह कौन आ रहा है ?'

दीर्घ कर्ण नामक विडाल गृद्ध को देखकर भयाक्रान्त होकर सोचने लगा— य, अब मैं मारा गया। इस समय मैं इसके निकट से भाग भी नहीं सकता, रन्तु नीति कहती है कि—

तावद् भयस्य भेतव्यं यावद् भयमनागतम्।
आगतं तु भयं वीक्ष्य नरः कुर्याद्यथोचितम्॥

अतः जो होना होगा, वह होगा। ऐसा सोचकर वह विडाल गृध्र के कट जाकर बोला—आर्य, मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ।

गृध्र ने कहा कि 'तुम कौन हो ?'

दीर्घकर्ण ने कहा कि मैं विडाल हूँ।

गृध्र ने कहा कि 'दूर हटो, अन्यथा तुम मेरे द्वारा मारे जाओगे।'

विडाल ने कहा—पहले मेरा वचन सुन लीजिए, पश्चात् यदि मैं मारने ग्य होऊँ, तब मारियेगा—

जातिमात्रेण किं कश्चिद्धन्यते पूज्यते क्वचित्।
व्यवहारं परिज्ञाय वध्यः पूज्योऽथवा भवेत्॥

गृध्र ने कहा कि तुम्हारे आने का कारण क्या है ?

विडाल ने कहा कि यहाँ मैं नित्यप्रति गंगा में स्नान करके निरामिष ोजन करने वाला, ब्रह्मचारी तथा चान्द्रायण व्रत में लीन हूँ। मेरे समक्ष भी पक्षी आपके धर्मज्ञान की प्रशंसा करते हैं। अतः आप ऐसे वयोवृद्ध र्मात्मा से मैं धर्म श्रवण हेतु यहाँ उपस्थित हूँ, परन्तु आप ऐसे धर्मात्मा हैं क मुझ अतिथि को ही मारने के लिए उद्यत हैं। घर में आगन्तुक अतिथि का त्कार करना चाहिए, भले ही वह शत्रु हो।

विडाल की बातों को सुनकर गृध्र ने कहा कि विडाल को माँस बहुत प्रिय है और यहाँ पक्षियों के बच्चे रहते हैं। इसीसे मैं यहाँ से तुम्हें दूर ाने के लिए कहता हूँ।

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

गृध्र की बातों को सुनकर विडाल ने भूमि को स्पर्श करके कानों
पकड़ कर कहा कि मैंने धर्मशास्त्र सुनकर विरक्त होने के कारण कि
चान्द्रायण व्रत किया है और 'अहिंसा परमो धर्मः' धर्मशास्त्र की इस बात
स्वीकार किया है।

इस प्रकार विडाल अपने वचनों से गृध्र को विश्वास दिलाकर वृक्ष
कोटर में रहने लगा।

तदनन्तर वह कुछ समय व्यतीत होने पर पक्षि शावकों पर आक्रम
करके उन्हें अपने कोटर में रखकर प्रतिदिन खाने लगा। जिनके बच्चों
उसने खा लिया, वे दुखित होकर रोते हुए अपने बच्चों के खो
वाले को खोजने लगे। जब विडाल को यह ज्ञात हुआ, तब वह उस को
से निकलकर भाग गया। तदनन्तर पक्षियों ने इधर-उधर खोजते हुए उ
वृक्ष के कोटर में बच्चों की हड्डियाँ प्राप्त कीं। अतः पक्षियों ने परस्पर निश्चि
किया कि 'इसी जगद्गव ने हमारे बच्चों को खाया है।' अतः सभी पक्षि
ने उसे मार डाला। अतः मैं कहता हूँ कि—

अज्ञातकुलशीलस्य वासो देयो न कस्यचित्।

यह सुनकर क्रोधपूर्वक उस शृगाल ने कहा कि जब प्रथम दिन मृग
आपकी भेंट हुई थी, उस समय उसके लिए भी आप 'अज्ञात कुलशील' ही
तब कैसे आपके साथ इसका स्नेह उत्तरोत्तर बढ़ता जा रहा है?

जिस प्रकार यह मृग मेरा बन्धु है, उसी प्रकार आप भी मेरे बन्धु है
यह सुनकर मृग ने कहा कि इस प्रकार के उत्तर प्रत्युत्तर से क्या लाभ? ह
सभी एक स्थान पर विश्वासपूर्वक बातचीत करते हुए निवास करें।

मृग की बातों को सुनकर कोवे ने कहा—'ऐसा ही हो।'

एक दिन शृगाल ने एकान्त में मृग से कहा कि मित्र, इस वन के ए
भाग में धानों से भरा हुआ एक खेत है। मैं तुम्हें वह खेत दिखाऊँगा।
मृग खेत देखने के बाद प्रतिदिन वहाँ जाकर धान खाने लगा। कुछ दिनों
उपरान्त खेत के मालिक ने मृग को देखकर वहाँ जाल फैला दिया। तदनन्

CC-O. Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

मृग पुनः वहाँ आया और धान चरता हुआ उस जाल में फँस गया। ने मन में सोचा कि, 'कालपाश के समान इस व्याध के पाश से मुक्त करने लिए मेरे मित्र शृगाल के अतिरिक्त अन्य कौन समर्थ है ?'

इसी बीच वह शृगाल वहाँ उपस्थित होकर सोचने लगा कि 'मेरी ट नीति सफल हो गई, अब मेरा मनोरथ सिद्ध होगा। अब मुझे पर्याप्त जन मिलेगा।'

मृग अपने मित्र शृगाल को देखकर प्रसन्नचित्त होकर कहने लगा— व मेरे बन्धन को काटो और शीघ्र मेरी रक्षा करो, क्योंकि आपत्ति में ही त्र की परीक्षा होती है।

शृगाल बार-बार जाल को देखकर सोचने लगा कि यह मृग दृढ़ बन्धनों बँधा हुआ है। इसने कहा कि 'मित्र, तांतों से बना हुआ यह जाल है और ज भगवान् सूर्य का दिन है। मैं इन तांतों को दाँतों से कैसे स्पर्श करूँ ? : मित्र, यदि तुम मन में अन्य किसी प्रकार का विचार न करो, तो तःकाल जो तुम कहोगे, वही मैं करूँगा।' ऐसा कहकर वह शृगाल उसके कट ही अपने को छिपाकर स्थित हो गया।

तदनन्तर वह कौवा सायंकाल अपने मित्र मृग को घर पर न आया हुआ कर इधर-उधर खोजकर इस प्रकार उसे बद्ध देखकर बोला —'मित्र, क्या ?

मृग ने कहा—मित्र की बात को न मानने का यह फल है। जैसे कहा गया है—

सुहृदां हितकामानां यः शृणोति न भाषितम्।
विपत्संन्निहिता तस्य स नरः शत्रुनन्दनः॥

कौवे ने पूछा—वह वञ्चक शृगाल कहाँ है ?

मृग ने कहा—मेरे मांस की कामना करने वाला यहीं बैठा है।

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

कौवे ने कहा—मित्र, मैंने पहले ही कहा था—

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

परोक्षे कार्य हन्तारं प्रत्यक्षे प्रियवादिनम् ।
वर्जयेत्तादृशं मित्रं विषकुम्भं पयोमुखम् ।।

तदनन्तर कौवा ऊँची साँस लेकर बोला—'अरे कपटी, तूने यह क्या क कर्म किया ?

तदनन्तर कौवे ने प्रातःकाल खेत के मालिक को हाथ ये डण्डा लेकर आ हुए देखा । उसने उसे देखकर अपने मित्र से कहा कि 'मित्र मृग, तुम अपने मृतवत् बनाकर हवा से अपने पेट को फुलाकर पैरों को निश्चल करके जाओ । मैं तुम्हारी आँखों को चोंच से खोदूँगा । जब मैं शब्द करूँगा, तब उठकर शीघ्र भाग जाना ।

मित्र कौवा के वचनानुसार वह मृग वैसे ही स्थित हो गया ।

तदनन्तर खेत के मालिक ने प्रसन्नतापूर्वक मृग को देखा और कहा 'आह ! यह तो स्वयं ही मर गया है ।' ऐसा कहकर उस मृग को बन्धनों मुक्त करके जाल समेटने का प्रयत्न करने लगा । तत्पश्चात् उस मालिक कुछ दूर चले जाने पर कौवे के शब्द को सुनकर वह मृग शीघ्रता से उठ भाग गया । जब खेत के मालिक ने क्रोध पूर्वक उसे मारने के लिए डं फेंका, तो वह शृगाल को लगा, जिससे वह मर गया, इसी से मैं कहता हूँ

भक्ष्यभक्षकयोः प्रीतिर्विपत्तेरेव कारणम् ।

कौवा ने पुनः कहा—मैं अभिन्न मित्र बनकर तुम्हारी सहायता करूँगा

हिरण्यक ने कहा—तुम चञ्चल स्वभाव के हो । ऐसे स्वभाव वालों साथ स्नेह नहीं करना चाहिए ।

लघुपतनक नामक कौवा ने कहा—मैंने सभी बातें सुनी, फिर भी मे संकल्प है कि तुम्हारे साथ मित्रता अवश्य करनी चाहिए । यदि ऐसा नहीं हु तो मैं निराहार रहकर अपना प्राण त्याग दूँगा । आप ऐसा गुणवान् मित्र कहाँ मिलेगा ?

लघुपतनक की बातों को सुनकर हिरण्यक बिल से बाहर आकर बोल अहा ! आपने अपने अमृत वचनों से मुझे तृप्त कर दिया । पश्चात् दोनों में मै

CC-O. Vasishtha Tripathi Collection. Digitized by eGangotri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

हो गई और हिरण्यक उस कौवे को अनेक प्रकार के विशिष्ट भोजनों से प्रसन्न करके अपने बिल के भीतर गया और वह कौवा भी अपने स्थान को चला गया। उसी दिन से दोनों परस्पर भोजन के आदान-प्रदान तथा विश्वासपूर्वक प्रेमालाप से समय व्यतीत करने लगे।

एक दिन लघुपतनक ने कहा कि मित्र इस स्थान पर भोजन बड़े ही कष्ट से प्राप्त होता है। अतः इस स्थान को छोड़कर दूसरे स्थान को जाना चाहता हूँ।

हिरण्यक ने कहा—मित्र, कोई दूसरा स्थान निश्चित किये बिना प्रथम स्थान को नहीं छोड़ना चाहिए।

लघुपतनक ने कहा कि मित्र, दण्डक वन में कर्पूर गौर नामक एक तालाब है। वहाँ मेरा एक प्राचीन मित्र मन्थर नामक कच्छप है, जो स्वभावतः धार्मिक है। वह विशिष्ट भोजन देकर हम दोनों को पुष्ट करेगा।

हिरण्यक ने कहा कि यदि ऐसी बात है, तो मैं भी यहाँ रहकर क्या करूँगा ?

तदनन्तर दोनों शुभ मुहूर्त में उस सरोवर के निकट पहुँचे। वहाँ मन्थर ने इन दोनों का उचित आतिथ्य सत्कार किया।

लघुपतनक ने अपने मित्र मन्थर से मित्र हिरण्यक का परिचय कराया और कपोतराज चित्रग्रीव की सम्पूर्ण कथा कही, जिसे सुनकर मन्थर बहुत ही प्रसन्न हुआ, पुनः आतिथ्य सत्कार के साथ निवेदन किया कि यदि कोई रहस्य की बात न हो, तो आप इस निर्जन वन में निवास का कारण बतावें।

हिरण्यक ने कहा कि—मित्र से गोपनीयता क्या ? सुनिए—

मूषक-परिव्राजक की कथा

चम्पकावती नगर में संन्यासियों का एक मठ है, जहाँ चूड़ाकर्ण नामक एक संन्यासी रहता था। वह अपने भोजन के पश्चात् अवशिष्ट अन्न को पात्र में रखकर उसे खूंटी पर लटका देता था और मैं उसे प्रतिदिन कूद-कूद कर खाता था। एक दिन उसका प्रिय मित्र वीणाकर्ण उससे मिलने आया।

CC-O. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri
Dr. Murugharajendra Book Centre, Singetti

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

उसके साथ बात-चीत करते हुए चूड़ाकर्ण मुझे भयभीत करने के लिए पुराने बाँस के टुकड़े को पृथ्वी पर पटकने लगा। यह देखकर वीणाकर्ण ने कहा कि मित्र, आप मेरी बातों से विरक्त तथा अन्य बातों की ओर आसक्त मालूम होते हैं, क्या कारण है ?

चूडाकर्ण ने कहा—मित्र, मैं तुम्हारी वार्ता से विरक्त नहीं हूँ, परन्तु देखो—मेरा अपकारी यह मूषक सदैव मेरे पात्र में रखे हुए अन्न को कूद-कूद कर खाता है।

वीणाकर्ण ने खूंटी को देखकर कहा कि मूषक अल्पबली होता हुआ इतना दूर कैसे कूदता है ? यहाँ धन ही कारण है—

धनवान्वलवांल्लोके सर्वः सर्वत्र सर्वदा।

तदनन्तर इस संन्यासी ने खनित्री (भूमि खोदने वाला हथियार) लेकर मेरा बिल खोदकर बहुत दिनों का सञ्चित मेरा धन निकाल लिया। तत्पश्चात् मैं शक्तिहीन तथा उत्साह रहित होकर अपना आहार उपार्जन करने में असमर्थ हो गया। एक दिन मुझे धीरे-धीरे चलते हुए देखकर चूडाकर्ण ने कहा कि यह वही मूषक है, जो कल धन के बल से ऊपर उछलता था। आज धनाभाव के कारण चलने में भी असमर्थ हो गया है।

इस बात को सुनकर मैंने एकान्त में विचार किया कि अब इस स्थान पर रहना उचित नहीं है और दूसरों से यह वृतान्त कहना भी ठीक नहीं है।

अर्थनाशं मनस्तापं गृहे दुश्चरितानि च।
वञ्चनं चापमानं च मतिमान्न प्रकाशयेत् ॥

तत्पश्चात् मेरे पुण्यों के उदय से इस कौवे मित्र ने स्नेह की कृपा दृष्टि से मुझे अनुगृहीत किया और इस समय मैंने अपने पुण्य कर्मों की परम्परा से आपका आश्रम पाकर स्वर्ग प्राप्त कर लिया।

यह सुनकर मन्थर ने कहा कि मित्र, आप बहुज्ञ हैं। मैं आपके सामने अपना क्या पाण्डित्य प्रकाशित करूँ। आप अब यहीं मेरे साथ रहकर अपना समय व्यतीत करें।

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

इस प्रकार वे सभी स्वेच्छापूर्वक आहार-विहार करते हुए अपना समय व्यतीत करने लगे। एक दिन चित्राङ्ग नामक मृग किसी से त्रसित होकर वहाँ आया। तत्पश्चात् उस मृग को देखकर मन में भय की आशंका करके मन्थर जल में, मूषक बिल में तथा कौवा वृक्ष पर चला गया। कौवे ने दूर तक देखा—भय का कोई कारण नहीं दृष्टिगत हुआ। तदनन्तर उसके कथनानुसार सभी एक स्थान पर एकत्रित हुए।

मन्थर ने मृग से कहा—भाई मृग, आपका स्वागत है, स्वेच्छापूर्वक जल तथा भोजन ग्रहण करें तथा यहाँ रहकर इस वन को सनाथ करें।

चित्राङ्ग मृग ने कहा कि व्याध के डर से भाग कर मैं आप लोगों के साथ मित्रता चाहता हूँ।

हिरण्यक ने कहा कि आपने तो हम लोगों के साथ मैत्री बिना प्रयत्न से ही प्राप्त कर ली। आप यहाँ अपने घर के समान रहें।

हिरण्यक की बात सुनकर वह मृग आनन्द पूर्वक इच्छानुसार भोजन तथा जल प्राप्त कर सरोवर के निकट वृक्ष की छाया में बैठ गया।

तदनन्तर मन्थर ने कहा—मित्र मृग, इस निर्जन वन में तुम किससे भयभीत हुए हो? क्या यहाँ व्याध भ्रमण करते हैं?

मृग ने कहा—कलिङ्ग देश में रुक्मांगद नामक एक राजा है। वह दिग्विजय की कामना से चन्द्रभागा नदी के किनारे अपनी सेना के साथ ठहरा हुआ है। प्रातः काल वह यहाँ कर्पूर सरोवर के निकट आ जायेगा—ऐसी किवदन्ती व्याधों के मुख से सुनी गई है। अतः यहाँ भी प्रातः काल निवास करना भय का कारण है। अतः विचार पूर्वक कार्य करना उचित है।

यह सुनकर भयभीत कच्छप ने कहा—मैं दूसरे जलाशय में जाता हूँ।

कौवा तथा मृग दोनों बोले—'ऐसा ही हो।'

तत्पश्चात् हिरण्यक ने हँस कर कहा कि दूसरे जलाशय जाने में मन्थर का कुशल तो है, पर स्थल मार्ग पर जाते हुए उसकी रक्षा कैसे होगी? अतः इस सम्बन्ध में कोई उपाय सोचना चाहिए।

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

उपायेन हि यच्छक्यं न तच्छक्यं पराक्रमैः ।
शृगालेन हतो हस्ती गच्छता पङ्कवर्त्मना ।।

दोनों ने पूछा—यह कैसे ?

हिरण्यक ने कहा—सुनो—

हस्ति–धूर्तशृगाल कथा

ब्रह्मारण्य में कर्पूर तिलक नामक एक हाथी रहता था। उसे देख कर शृगालों ने सोचा कि यदि यह किसी उपाय से मर जाता, तो इसके शरीर से हम लोगों के लिए चार मास का भोजन मिल जाता। उनमें से एक वृद्ध शृगाल ने प्रतिज्ञा की कि मैं अपनी बुद्धि के प्रभाव से इसे मारूँगा।

तदनन्तर वह धूर्त शृगाल, कर्पूर तिलक हस्ति के निकट जाकर उसे साष्टाङ्ग प्रणाम करके बोला—देव, मेरे ऊपर कृपा दृष्टि करें।

हाथी ने कहा—तुम कौन हो ? कहाँ से आये हो ?

उसने कहा—मैं शृगाल हूँ। वन के सभी पशुओं ने मिलकर मुझे आपके निकट भेजा है और कहा है कि वन में राजा के विना रहना ठीक नहीं है अतः सर्वगुण सम्पन्न आपको ही वन का राजा बनाने के लिये सभी ने चुना है और यह भी कहा है कि आप विशेषरूप से राजधर्म भी जानते है। अतः राज्याभिषेक का मूहुर्त न टले, आप शीघ्रता से मेरे साथ चलें।

इस प्रकार कथन के उपरान्त वह शृगाल आगे-आगे तथा कर्पूर तिलक राज्य लोभ के कारण उसके पीछे-पीछे चलता हुआ महापंक में फँस गया। तदनन्तर उस हाथी ने कहा कि मित्र शृगाल, अब क्या करना चाहिए महापंक में फँसकर मैं मरना चाहता हूँ। घूमकर मेरी ओर देखो।

शृगाल ने हँसते हुए कहा—महाराज, मेरी पूँछ के अग्रभाग को पकड़ कर आप शीघ्र पंक से बाहर निकल आवें।

तदनन्तर शृगालों ने इस महापंक में फँसे हुए हाथी को अपनी इच्छानुसार भक्षण किया। इसलिये मैं कहता हूँ कि साम से जो कार्य सिद्ध होता है वह पराक्रम से नहीं—

CC-O. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri
Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha
Sri Vidyaranya Sanskrit Research Institute and Sri Vidyaranya Sanskrit Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain) Digitized by eGangotri

उपायेन हि यच्छक्यं न तच्छक्यं पराक्रमैः ।

तत्पश्चात् भयभीत मन्थर उस सरोवर को छोड़कर दूसरे सरोवर के लिए चला। हिरण्यक इत्यादि मित्र भी प्रेमवश उसके पीछे-पीछे चले। कुछ दूर जाने के दाद भूखे-प्यासे व्याध ने मन्थर को देखा और उसे पकड़ कर अपने धनुष में बाँध कर घर की ओर चला। यह देखकर मृग, कौवा तथा चूहा तीनों बहुत ही दुखी हुए और रोते हुए उस व्याध का अनुगमन करने लगे। हिरण्यक ने चित्राङ्ग मृग तथा लघुपतनक कौवे से कहा— जब तक यह व्याध इस वन से बाहर नहीं जाता है, तब तक मन्थर को मुक्त करने का प्रयत्न करना चाहिए।

यह सुनकर उन दोनों ने कहा—शीघ्र कहिए क्या करना चाहिए ?

हिरण्यक ने कहा कि चित्राङ्ग जल के निकट जाकर अपने को मृतक के समान दिखावे और लघुपतनक उसके ऊपर बैठकर उस पर चोंच मारे। ऐसा करने पर निश्चित ही वह व्याध मृग के माँस के लोभ से कच्छप को छोड़कर इसके तिकट आ जायेगा। उस समय मैं मन्थर के बन्धन को काट दूँगा और व्याध ज्यों ही आप दोनों के समीप पहुँचे, वहाँ से शीघ्र भाग जाना।

तत्पश्चात् चित्राङ्ग मृग तथा लघुपतनक कौवे ने वैसा ही किया, श्रान्त व्याध ने पानी पीकर वृक्ष के नीचे विश्राम करना चाहा, उसी समय मृत मृग को देख कर बहुत ही प्रसन्न हुआ और मन्थर को वहीं छोड़कर हाथ में कैंची लिए हुए मृग की ओर प्रस्थान किया। इसी बीच हिरण्यक नामक मूषक ने मन्थर के जाल को काट दिया और वह शीघ्रता ने जल में प्रवेश कर गया। जब मृग ने अपने निकट आते हुए व्याध को देखा, तब वह भी उठ कर शीघ्रता से भाग गया। तदनन्तर वह व्याध जब लौट कर वृक्ष के निकट आया, तब वहाँ कच्छप को न प्राप्त कर सोचने लगा—

यो ध्रुवाणि परित्यज्य अध्रुवाणि निषेवते ।
ध्रुवाणि तस्य नश्यन्ति अध्रुवं नष्टमेव हि ॥

CC-O. Jagadguru Kripa Sri Abhinava Vidyatirtha Mahaswamiji Research Academy, Bengaluru. Digitized by eGangotri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

तदनन्तर वह व्याध निराश होकर अपने स्थान पर आया और मन्थर इत्यादि सभी आपत्ति से छूट कर अपने-अपने स्थल पर सुखपूर्वक रहने लगे।

यह सब कथा सुन कर प्रसन्न चित्त राजपुत्रों ने कहा कि हम लोगों ने मित्र लाभ सुना, हम सभी सुखी हुए और हम लोगों के मनोरथ भी सिद्ध हुए।

राजकुमारों की बात सुनकर विष्णुशर्मा ने कहा कि इस कथा से आप लोगों के मनोरथ पूर्ण हुए ही और भी होवे—

भित्रं प्राप्नुत सज्जनाः जनपदैर्लक्ष्मीः समालम्ब्यताम्,
भूपालाः परिपालयन्तु वसुधां शश्वत्स्वधर्मे स्थिताः।
आस्तां मानसतुष्टये सुकृतिनां नीतिर्नवोढेव वः,
कल्याणं कुरुतां जनस्य भगवांश्चन्द्रार्धचूडामणिः॥

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

प्रस्ताविका

अस्ति भागीरथीतीरे पाटलीपुत्रं नामधेयं नगरम् । तत्र सर्वस्वामिगुणैर्युक्तः सुदर्शनो नाम नरपतिरासीत् । स भूपतिरेकदा केनापि पठ्यमानं श्लोकद्वयं शुश्राव—

अनेकसंशयोच्छेदि परोक्षार्थस्य दर्शकम् ।
सर्वस्यलोचनं शास्त्रं यस्य नास्त्यन्ध एव सः ॥

× × ×

यौवनं धनसम्पत्तिः प्रभुत्वमविवेकिता ।
एकैकमप्यनर्थाय किमुत यत्र चतुष्टयम् ॥

इत्याकर्ण्यात्मनः पुत्रान् शास्त्रविमुखान् नित्यमुन्मार्गगामिनो विलोक्य समुद्विग्नमनाः स राजा चिन्तयामास—

कोऽर्थः जातेन पुत्रेण यो न विद्वान्न धार्मिकः ।
कथञ्चित्स्वोदरभराः किन्न शूकरशावकाः ॥

× × ×

अजातमृतमूर्खाणां वरमाद्यौ न चान्तिमः ।
सकृद्दुःखकरावाद्यावन्तिमस्तु पदे पदे ॥

एतच्चिन्तयित्वा स राजा पण्डितसभा कारितवान् ।

राजोवाच—भो भोः पण्डिताः ! श्रूयताम् । अस्ति भवत्सु कश्चिद्देवम्मूतो विद्वान् यो मम पुत्राणां नित्यमुन्मार्गगामिनामिदानीं नीतिशास्त्रोपदेशेन द्वितीयं जन्म कारयितुं समर्थः ?

एतत् श्रुत्वा विष्णुशर्मनामा महापण्डितः सकलनीतिशास्त्रतत्त्वज्ञः बृहस्पतिरिवाब्रवीत्—देव, महाकुलभूता एते राजपुत्राः तन्मया नीतिं ग्राहयितुं शक्यन्ते । अतोऽहमत्र संसदि ध्रुवं प्रतिजाने यत्—षण्मासाभ्यन्तर एव महाकुलसम्भूतान् तव शिष्टान् सुतान् अवश्यं नीतिशास्त्रविज्ञान् करिष्यामीति ।

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

एवं परिषदि प्रतिजानानं तम्पण्डितराजं स राजा प्रशंसन् सविनयमुवाच-

एतेषामस्मत्पुत्राणां नीतिशास्त्रोपदेशाय 'तत्र भवन्त एव प्रमाणम्' इत्युक्त्वा स राजा तस्मै विष्णुशर्मणे बहुमानपुरस्सरं स्वपुत्रान् गुरुकुलवासार्थं समर्पितवान् ।

●

मित्रलाभः

अथाश्वमप्रासादपृष्ठे सुखोपविष्टानां राजपुत्राणां पुरस्तात् प्रस्ताबक्रमेण स पण्डितोऽब्रवीत् भो राजपुत्राः शृणुत—

हिन्दी-भाषा—तदनन्तर एक दिन राजभवन की अट्टालिका पर आनन्दपूर्वक बैठे हुए राजपुत्रों के समक्ष महापण्डित विष्णुशर्मा ने कहा—हे राजपुत्रो, सुनो—

काव्यशास्त्रविनोदेन कालो गच्छति धीमताम् ।
व्यसनेन च मूर्खाणां निद्रया कलहेन वा ।।

हिन्दी-भाषा—बुद्धिमानों का समय काव्य शास्त्र की चर्चा करते हुए आनन्दपूर्वक व्यतीत होता है और मूर्खों का समय दुर्व्यसन, निद्रा तथा कलह के द्वारा व्यतीत होता है ।

तद् भवतां विनोदाय काककूर्मादीनां विचित्रां कथां कथयामि ।

राजपुत्रैरुक्तम्—आर्य ! कथ्यताम् ।

हिन्दी-भाषा—अतः आप लोगों के विनोद के लिए मैं कौवा तथा कच्छप आदि की विचित्र कथा कहता हूँ ।

राजपुत्रों ने कहा—आर्य, कहिए ।

विष्णुशर्मोवाच—शृणुत । सम्प्रति मित्रलाभः प्रस्तूयते । यस्यायमाद्यः श्लोकः ।

विष्णु शर्मा ने कहा—सुनो । इस समय मित्रलाभ प्रस्तुत कर रहा हूँ, जिसका यह प्रथम श्लोक है—

CC-O. Vasishtha Tripathi Collection. Digitized by eGangotri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

असाधनाः वित्तहीनाः बुद्धिमन्तः सुहृत्तमाः ।
साधयन्ताशु कार्याणि काककूर्ममृगाखुवत् ।।

हिन्दी-भाषा – सभी प्रकार के साधनों से रहित तथा धनहीन होते हुए भी अच्छे मित्रों वाले बुद्धिमान अपने कार्यों को शीघ्रता से इस प्रकार सिद्ध कर लेते हैं, जिस प्रकार कौवा, कच्छप, मृग तथा चूहे ने सिद्ध किया ।

राजपुत्रा ऊचुः—कथमेतत् ?

हिन्दी-भाषा—राजपुत्रों ने पूछा—वह कैसे ?

विष्णुशर्मा कथयति —

लघुपतनककाकस्य कथा

अस्ति गोदावरीतीरे विशालः शाल्मलीतरुः । तत्र नानादिग्देशादागत्य रात्रौ पक्षिणः निवसन्ति । अथ कदाचिदवसन्नायां रात्रावस्ताचलचूडावलम्बिनि भगवति कुमुदिनीनायके चन्द्रमसि लघुपतनकनामा वायसः कृतान्तभिव द्वितीयमायान्तं व्याधमपश्यत् । तमवलोक्याचिन्तयत्—'अद्य प्रातरेवानिष्ट दर्शनं जातम् । न जाने किमनभिमतं दर्शयिष्यति ?' इत्युक्त्वा तदनुसरण-क्रमेण व्याकुलश्चलितः ।

हिन्दी-भाषा—विष्णु शर्मा कहते हैं—गोदावरी नदी के तट पर एक बहुत बड़ा सेमल का वृक्ष है, उसपर अनेक दिशाओं तथा देशों से आकर पक्षीगण रात्रि में विश्राम करते हैं । एक दिन रात्रि व्यतीत होने पर जब कुमुदिनी नायक भगवान् चन्द्र अस्त हो रहे थे, उसी समय लघु पतनक नामक कौवे ने द्वितीय यमराज के समान आते हुए एक व्याध को देखा और मन में सोचने लगा कि 'आज प्रातःकाल ही अशुभ दर्शन हुआ, पता नहीं क्या अनिष्ट होगा ? ऐसा कहकर वह कौवा व्याध के पीछे-पीछे चला ।

अथ तेन व्याधेन तण्डुलकणान्विकीर्य जालं विस्तीर्णम् । स्वयं प्रच्छन्नो भूत्वा स्थितः । तस्मिन्नेव काले चित्रग्रीवनामा कपोतराजः सपरिवारो यियति

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

विसर्पस्तांस्तण्डुलकणानवलोकयामास। ततः कपोतराजस्तत्तण्डुलकणलुब्धान्कपोतान्प्रत्याह—'कुतोऽत्र निर्जने वने तण्डुलकणानां सम्भवः ?' तन्निरूप्यतां तावत्, भद्रमिदं न पश्यामि। एतेन मम मनसि अनिष्टस्य शङ्कामुत्पद्यते। यतो हि संदिग्धे कर्मणि प्रवृत्तिकरणे भद्रं नैव भवति। तत्प्रायेणानेन तण्डुलकणलोभेनास्माभिरपि तथा न भवितव्यम्। यथा—

कङ्कणस्य तु लोभेन मग्नः पङ्के सुदुस्तरे।
वृद्धव्याघ्रेण सम्प्राप्तः पथिकः स मृतो यथा॥

हिन्दी-भाषा – तदनन्तर वह व्याध चावल के कणों को बिखेर कर उस पर जाल फैलाकर छिप गया। उसी समय अपने परिवार के साथ आकाश में उड़ते हुए कपोत राज चित्रग्रीव ने फैले हुए चावल के कणों को देखा और चावल कणों के लोभी अपने उन कपोतों से कहा—'इस निर्जन वन में चावल के कणों का होना कैसे सम्भव है ? विचार करना चाहिए। मैं यहाँ कल्याण नहीं देखता हूँ। मेरे मन में अनिष्ट की शंका उत्पन्न होती है, क्योंकि संदिग्ध कार्य में प्रवृत्त होना कल्याणकारी नहीं होता। अतः चावल के कणों के लोभ में हम लोग वैसे ही न हो जायँ, जैसे कङ्कण के लोभ से पथिक दुस्तर कीचड़ में फँस गया।

कपोता ऊचुः—कथमेतत् ?
सोऽब्रवीत्।
हिन्दी-भाषा—कपोतों ने पूछा—यह कैसे ?
कपोत राज ने कहा—

बृद्धव्याघ्र—लुब्धपथिकस्य कथा

अहमेकदा दक्षिणारण्ये चाऽन्नपश्यम्—एको वृद्धव्याघ्रः स्नातः कुशहस्तः सरस्तीरे ब्रूते—'भो भो पान्थाः। सुवर्णकङ्कणं गृह्यताम्।' ततो लोभाकृष्टेन केनचित्पान्थेनालोचितम्—भाग्येनैतत्संभवति, किन्त्वस्मिन्नात्मसंदेहे प्रवृत्तिर्न विधेया। यतः—

हिन्दी-भाषा—एक दिन दक्षिण के वन में घूमता हुआ मैंने देखा कि एक वृद्ध व्याघ्र स्नान करके हाथ में कुशा लेकर तालाब के किनारे कहता था कि 'ऐ पथिको, यह सोने का कङ्कण ग्रहण करो।'

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

तत्पश्चात् एक लोभी पथिक ने सोचा कि यह तो भाग्य से ही होता है, किन्तु अपने जीवन के सन्देह स्थान में प्रवृत्ति नहीं करनी चाहिए। क्योंकि—

अनिष्टादिष्टलाभेऽपि न गतिर्जायते शुभा।
यत्रास्ते विषसंसर्गोऽमृतं तदपि मृत्यवे॥

अन्वयः—अनिष्टाद् इष्टलाभेऽपि शुभा गतिः न जायते, यत्र विषसंसर्गः आस्ते, तद् अमृतम् अपि मृत्यवे भवति।

कठिनशब्दार्थाः—अनिष्टात्=अहितकरात्। इष्टलाभे=हितकरवस्तु लाभे। शुभा=शोभना। गतिः=परिणामः। विषसंसर्गः=विषसंयोगः। मृत्यवे=नाशाय।

हिन्दी-भाषा—अनिष्ट वस्तु से हितकर वस्तु का लाभ भी हो, उसका परिणाम अच्छा नहीं होता, क्योंकि जिस अमृत में विष मिला होता है, वह अमृत भी मृत्यु कारक होता है।

किन्तु सर्वत्र जीवननिर्वाहार्थमर्थार्जनप्रवृत्तौ संदेह एव तथा चोक्तम्—

हिन्दी भाषा—लेकिन सभी जगह जीवन निर्वाह के लिए धनोपार्जन की प्रवृत्ति में सन्देह ही होता है, क्योंकि कहा गया है—

न संशयमनारुह्य नरो भद्राणि पश्यति।
संशयं पुनरारुह्य यदि जीवति पश्यति।

अन्वयः—नरः संशयम् अनारुह्य भद्राणि न पश्यति, पुनः संशयम् आरुह्य यदि जीवति तदा पश्यति।

कठिनशब्दार्थाः संशयम् अनारुह्य=अस्मिन् कर्मणि जीविष्यामि मरिष्यामि वेति संदेहारोहणमकृत्वा। भद्राणि—शुभकार्याणि। संशयम् आरुह्य=जीवनसंदेहे पातयित्वा।

हिन्दी-भाषा—मनुष्य अपने को खतरे में डाले बिना कल्याण नहीं पाता। यदि वह खतरे को पार कर गया, तो वह कल्याण का ही सुख भोगता है।

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

तन्निरूपयामीति विचिन्त्य प्रकाशं ब्रूते—'कुत्र तव कङ्कणम्।

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

व्याघ्रो हस्तं प्रसार्य दर्शयति ।

पान्थोऽवदत् —'कथं मारात्मके त्वयि विश्वासः ।

व्याघ्र उवाच—शृणु रे पान्थ ! प्रागेव यौवनदशायामहमतिदुवृत्त आसम् । अनेकगोमानुषाणां बधान्मे पुत्रा मृताः दाराश्च वंशहीनश्चाहम् । ततः केनचिद्धार्मिकेणाऽहमादिष्टः—'दानधर्मादिकं चरतु भवान् इति । तदुपदेशादिदानीमहं स्नानशीलः दाता वृद्धो गलितनखदन्तः कथं न विश्वासभूमिः ।

हिन्दी-भाषा—पथिक ने मन में विचार कर उस व्याघ्र से पूछा-तुम्हारा कङ्कण कहाँ है ? पथिक की बात सुनकर व्याघ्र ने हाथ फैलाकर कङ्कण दिखा दिया ।

पथिक ने कहा—हिंसात्मक प्रवृत्ति वाले में मैं कैसे विश्वास करूँ ?

बृद्ध व्याधु ने कहा—पथिक, तुम मेरी बात सुनो । मैं पहले जवानी की अवस्था में बहुत ही दुर्वत्त था । अनेक गायों तथा मनुष्यों के वध से मेरे पुत्र और मेरी स्त्री सभी मर गये, जिससे मैं वंशहीन हो गया । तत्पश्चात् एक धर्मात्मा ने मुझे उपदेश दिया कि 'आप दान धर्मादि करें ।' उसी उपदेश से मैं अब बृद्धावस्था में शिथिल नख दन्त वाला, स्नान शील तथा दाता बन गया हूँ । क्या मैं अब भी विश्वास पात्र नहीं हूँ ?

मम चैतावांल्लोभ विरहो येन स्वहस्तस्थमपि सुवर्णकङ्कणं यस्मै कस्मैचिद् दातुमिच्छामि, तथापि 'व्याघ्रो मानुषं खादतीति' लोकप्रवादो दुर्निवारः ।

हिन्दी-भाषा—मैं तो इतना निर्लोभ हो गया हूँ कि अपने हाथ में स्थित स्वर्ण कङ्कण भी जिस किसी को देना चाहता हूँ । फ़िर भी 'व्याघ्र मनुष्यों को खाता है ।' यह लोक प्रवाद दूर करना कठिन है ।

तदत्र सरसि स्नात्वा सुवर्णकङ्कणं गृहाण । ततो यावदसौ तद्वचः प्रतीतो लोभात्सरः स्नातुं प्रविशति, तावन्महापङ्के निमग्नः पलायितुमक्षमः ।

हिन्दी भाषा—अतः इस सरोवर में स्नान करके स्वर्ण कङ्कण को ग्रहण करो । तदनन्तर पथिक ने लोभ के कारण व्याघ्र के वचनों पर विश्वास करके ज्योंहीं स्नानार्थ तालाब में प्रवेश किया, त्यों कीचड़ में फँस गया और वहाँ से बाहर निकलने में असमर्थ हो गया ।

Sri Vijayabharathi Book Centre, Bhanuguda

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

पङ्के पतितं वृष्टा व्याघ्रोऽवदत्—"अहह ! महापङ्के पतितोऽसि । अतस्त्वामहमुत्थापयामि ।" इत्युक्त्वा शनैः शनैरुपगम्य तेन व्याघ्रेण धृतः स पान्थोऽचिन्तयत्—

हिन्दी-भाषा—तदनन्तर उस लोभी पथिक को पंक में फँसा हुआ देखकर उस व्याघ्र ने कहा—'अरे, तुम तो महापङ्क में फँस गये हो। अतः मैं तुम्हें निकालता हूँ। इस प्रकार वह वृद्ध व्याघ्र धीरे-धीरे उस लोभी पथिक के निकट पहुँच गया। यह देखकर वह पथिक सोचने लगा—

न धर्मशास्त्रं पठतीति कारणं,
न चापि वेदाध्ययनं दुरात्मनः ।
स्वभाव एवात्र तथातिरिच्यते,
यया प्रकृत्या मधुरं गवां पयः ॥

अन्वयः—दुरात्मनः धर्मशास्त्रं पठति इति कारणं न (भवति) वेदाध्ययनम् अपि कारणं न (भवति) किन्तु अत्र तथा स्वभाव एव अतिरिच्यते यथा गवां पयः प्रकृत्या मधुरं भवति ।

कठिनशब्दार्थाः—अतिरिच्यते = विशिष्यते ।

हिन्दी-भाषा—दुष्ट व्यक्ति के स्वभाव परिवर्तन में धर्मशास्त्र या वेद का अध्ययन कारण नहीं होता। यहाँ स्वभाव की प्रधानता उसी प्रकार रहती है जैसे घास तथा तृण आदि भक्षण करने पर भी गाय का दुग्ध स्वभाव से ही मधुर होता है।

तन्मया भद्रं न कृतं यद्-अत्र मारात्मके विश्वासः कृतः। तथा ह्युक्तम्—

हिन्दी-भाषा—अतः मैंने अच्छा नहीं किया कि इस हिंसक में विश्वास किया। जैसा कि कहा गया है—

नदीनां शस्त्रपाणिनां नखीनां शृङ्गिणान्तथा ।
विश्वासो नैव कर्त्तव्यः स्त्रीषु राजकुलेषु च ॥

अन्वयः— नदीनां शस्त्रपाणिनां नखीनां शृङ्गिणां स्त्रीषु राजकुलेषु च विश्वासः न एव कर्त्तव्यः ।

CC-O. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri
CC-O. Jagadguru Kripalu Parishat Collection. Digitized by eGangotri
CC-O. Vasishtha Tripathi Collection. Digitized by eGangotri
CC-O. Sringeri Math Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

हिन्दी-भाषा—नदियों, शस्त्र धारियों, बड़े-बड़े नख वालों, शृंग (सींग) वालों, स्त्रियों तथा राज कुल वालों का विश्वास नहीं करना चाहिए।

स हि गगनविहारी कल्मषध्वंसकारी,
दशशतकरधारी ज्योतिषां मध्यचारी।
विधुरपि विधियोगाद् ग्रस्यते राहुणाऽसौ,
लिखितमपि ललाटे प्रोज्झितुं कः समर्थः॥

अन्वयः—स हि गगनविहारी कल्मषध्वंसकारी ज्योतिषां मध्यचारी असौ विधुरपि विधियोगात् राहुणा ग्रस्यते। इह ललाटे प्रोज्झितुं कः समर्थः (भवति)

कठिनशब्दार्थाः—गगनविहारी = आकाशे विहरणशीलः। कल्मषध्वंसकारी = पापघ्नः। दशशतकरधारी = सहस्रकिरणः। ज्योतिषां मध्यचारी = तारकमध्यचारी। विधुः = चन्द्रः। विधियोगात् = भाग्यवशात्। प्रोज्झितुम् = निराकर्तुम्।

हिन्दी-भाषा—आकाश में विचरण करने वाला, पाप अन्धकार को दूर करने वाला, नक्षत्रों के बीच में विहार करने वाला चन्द्रमा भी भाग्य वश राहु के द्वारा ग्रसा जाता है। ललाट में लिखे हुए भाग्य को मिटाने में कौन समर्थ है?

इति चिन्तयन्नेवासौ व्याघ्रेण व्यापादितः खादितश्च। अतोऽहं ब्रवीमि—
'कङ्कणस्य तु लोभेन.....।'

हिन्दी-भाषा—इस प्रकार सोचते हुए उस पथिक को व्याघ्र ने मार डाला और उसे खा गया। इसी से मैं कहता हूँ कि कङ्कण के लोभ से लोभी पथिक मारा गया।

अतः सर्वथाऽविचारितं कर्म न कर्त्तव्यम्

हिन्दी-भाषा—अतः बिना सोचे समझे कोई कार्य नहीं करना चाहिए।

साहसा पिदधीत च क्रिया—
सविवेकः परमापदां पदम्।
वृणुते हि विमृश्यकारिणं,
गुणलुब्धाः स्वयमेव सम्पदः॥

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

अन्वयः—क्रियां सहसा न विदधीत, अविवेकः परमम् आपदां पदं भवति, गुणलुब्धाः सम्पदः विमृष्यकारिणं स्वयम् एव हि वृणुते ।

कठिनशब्दार्थाः—न विदधीत = न कुर्वीत । गुणलुब्धाः = गुणपक्षपातिन्यः । विमृष्यकारिणम् = विचार्यकर्मकर्त्तारम् । वृणुते = भजन्ते ।

हिन्दी-भाषा—सहसा कोई कार्य नहीं करना चाहिए, क्योंकि बिना विचारे किया हुआ कार्य आपत्ति का कारण होता है । गुणों पर मुग्ध होने वाली सम्पत्ति, विचार पूर्वक कार्य करने वालों को स्वयं वरण करती है ।

एतत् श्रुत्वा कश्चित्कपोतः सदर्पमाह—आः किमेवमुच्यते ?

हिन्दी-भाषा—यह सुनकर किसी कपोत ने अहंकारपूर्वक कहा—आह, आप ऐसा क्यों कहते हैं ?

शङ्काभिः सर्वभाक्रान्तमन्नं पानञ्च भूतले ।
प्रवृत्तिः कुत्र कर्त्तव्या ? जीवितव्यं कथं नु वा ॥

अन्वयः—भूतले अन्नं पानञ्च सर्वशंकाभिः आक्रान्तम्, कुत्र प्रवृत्तिः कर्त्तव्या, कथं वा नु जीवितव्यम् ।

हिन्दी-भाषा—पृथ्वी पर भोज्य तथा पेय सभी पदार्थ शंका युक्त हैं । ऐसी स्थिति में क्या ग्रहण किया जाय, क्या न किया जाय । यदि सभी पदार्थों को छोड़ दिया जाय, तो जीवन कैसे धारण किया जाय ।

अतोऽत्र विषये काऽपि विचारणा न कर्त्तव्या । किञ्चेह प्रवृत्तौ नाहं कञ्चिद् दोषं पश्यामीति । एतत् श्रुत्वा लोभाकृष्टाः = सर्वे कपोतास्तत्रोपविष्टाः ।

हिन्दी-भाषा—अतः भोजन के विषय में किसी प्रकार का विचार नहीं करना चाहिए, क्योंकि मैं इस प्रवृत्ति में कोई दोष नहीं देखता हूँ ।

यह सुनते ही सभी लोभी कपोत वहाँ जाल पर बैठ गये ।

असम्भवं हेममृगस्य जन्म
तथापि रामो लुलुभे मृगाय ।
प्रायः समापन्नविपत्तिकाले
धियोऽपि पुंसो मलिना भवन्ति ॥

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

अन्वयः--हेममृगस्य जन्म असम्भवं (भवति) तथापि रामः मृगाय लुलुभे । समापन्नविपत्तिकाले पुंसां धियः अपि प्रायः मलिनीभवन्ति ।

कठिनशब्दार्थाः—हेममृगस्य = स्वर्णमृगस्य । लुलुभे = लुब्धो बभूव । मलिनीभवन्ति = विचारशून्या भवन्ति ।

हिन्दी-भाषा—यद्यपि स्वर्ण मृग का जन्म असम्भव है, फिर भी राम स्वर्ण मृग पर मुग्ध हो गये । विपत्ति के समय प्रायः बुद्धिमानों की भी बुद्धि मलिन हो जाती है ।

अनन्तर सर्वे जालेन बद्धा बभूवुः । ततो यस्य वचनात्तत्रावलम्बितास्तं सर्वे तिरस्कुर्वन्ति स्म । यतः--

हिन्दी-अर्थ--तदनन्तर सभी कपोत जाल में बद्ध हो गये और जिस अभिमानी कपोत के कथनानुसार वहाँ आये थे, सभी उसका तिरस्कार करने लगे। क्योंकि —

न गणस्याग्रतो गच्छेत्सिद्धे कार्ये समं फलम् ।
यदि कार्यविपत्तिः स्यान्मुखरस्तत्र हन्यते ॥

अन्वयः--गणस्य अग्रतः न गच्छेत्, कार्ये सिद्धे समं फलं (भवति) यदि तत्र कार्य विपत्तिः स्यात् सर्वैः मुखरः हन्यते ।

कठिन शब्दार्था--मुखरः = प्रवर्तकः, मुख्यः ।

हिन्दी-भाषा—समूह का अग्रणी नहीं बनना चाहिए, क्योंकि कार्य की सिद्धि होने पर सभी को समान फल होता है, परन्तु जब कार्य में हानि होती है, तब सभी अग्रेसर का तिरस्कार करते हैं ।

इत्थं तस्य तिरस्कारं श्रुत्वा चित्रग्रीव उवाच अहो, नायमस्य दोषः ।

हिन्दी-भाषा--इस प्रकार उसके तिरस्कार को सुनकर चित्रग्रीव ने कहा--इसका इसमें कोई दोष नहीं है ।

विपत्तिकाले विस्मय एव कापुरुषलक्षणम् । तदत्र धैर्यमवलम्ब्य प्रतीकारश्चिन्त्यताम् ।

हिन्दी-भाषा—विपत्ति के समय व्यग्र होना कायर पुरुषों का लक्षण है । अतः ऐसे समय में धैर्य पूर्वक इसके प्रतीकार का उपाय सोचें—

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

विपदि धैर्यमथाभ्युदये क्षमा,
सदसि वाक्पटुता युधि विक्रमः ।
यशसि चाभिरुचिर्व्यसनं श्रुतौ,
प्रकृतिसिद्धमिदं हि महात्मनाम् ॥

अन्वयः—विपदि धैर्यम्, अथ अभ्युदये क्षमा, सदसि वाक् पटुता, युधि विक्रमः, यशसि च अभिरुचिः, श्रुतौ व्यसनम् इदं हि महात्मनाम् प्रकृतिसिद्धम् (भवति)

कठिनशब्दार्थाः—वाक् पटुता = वाक् नैपुण्यम् । श्रुतौ = शास्त्रे । व्यसनम् = आसक्तिः ।

हिन्दी-भाषा—विपत्ति में धैर्य, उन्नति में शान्ति, सभा में वाक् निपुणता युद्ध में पराक्रम, यश में अभिरुचि, शास्त्र में आसक्ति—ये सभी गुण महात्माओं में स्वभाव सिद्ध होते हैं ।

सम्पदि यस्य न हर्षो विपदि विषादो रणे च धीरत्वम् ।
स भुवनत्रयतिलकं जनयति जननी सुतं विरलम् ॥

अन्वयः—सम्पदि यस्य हर्षो न (भवति) विपदि विषादो न (भवति) रणे च धीरत्वं भवति, तं भुवनत्रयतिलकं विरलं सुतं (काचिदेव) जननी जनयति।

कठिनशब्दार्थाः—भुवनत्रयतिलकं = त्रिलोकरत्नम् ।

हिन्दी-भाषा—सम्पत्ति पाने पर जो प्रसन्न नहीं होता, विपत्ति में जो विषाद नहीं करता, रण में जो धैर्य रखता है, ऐसे त्रिलोक रत्न पुत्र को कोई अन्य ही माता जन्म देती है ।

तदिदानीमप्येवं क्रियताम् । यत् सर्वैरेकीचित्तभूय जालमादायोड्डीयताम्–

हिन्दी भाषा—अतः इस समय सभी मिलकर ऐसा करें कि इस जाल को लेकर उड़ जायं ।

अल्पानामपि वस्तूनां संहतिः कार्यसाधिका ।
तृणैर्गुणत्वमापन्नैर्बध्यन्ते मत्तदन्तिनः ॥

अन्वयः—अल्पानामपि वस्तूनां संहतिः कार्यसाधिका (भवति) । गुणत्व-

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

मापन्नैः तृणैः मत्तदन्तिनः बध्यन्ते ।

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

कठिनशब्दार्थाः - संहतिः = समुदायः । गुणत्वम् = रज्जुभावम् । आपन्नैः = प्राप्तैः । मत्तदन्तिनः = मत्तहस्तिनः ।

हिन्दी भाषा -- छोटी-सी वस्तुओं का समूह भी बड़े-बड़े कार्यों को सिद्ध कर देता है, जैसे बहुत तृणों का समूह संघीभूत होकर रस्से के रूप में होकर मत्त हाथी को भी बाँध देता है ।

इति विचिन्त्य सर्वेऽपि पक्षिणः ऐक्यमाहात्म्यमनुस्मरन्तः परस्परमेकचित्तीभूय जालमाशयोत्पतिताः । ततस्तेषु चक्षुर्विषयातिक्रान्तेषु पक्षिषु स व्याधो निवृत्तः ।

हिन्दी भाषा -- ऐसा सोचकर सभी पक्षी एकता के महत्व को ध्यान में रखते हुए एकमत होकर एक ही साथ उस जाल को लेकर उड़ गये। तत्पश्चात् वह व्याध उन पक्षियों के आँख से ओट होने पर चला गया ।

अथ लुब्धकं निवृत्तं दृष्ट्वा कपोता ऊचुः– किमिदानीं कर्तुमुचितम् ?

चित्रग्रीव उवाच—'यूयं सावधानाः शृणुत ।'

हिन्दी-भाषा --तदनन्तर व्याध को निवृत्त देखकर कपोतों ने कहा—'अब इस समय क्या करना चाहिए ?

चित्रग्रीव ने कहा—'तुम लोग सावधान होकर सुनो ।'

माता मित्रं पिता चेति स्वभावात्त्रितयं हितम् ।
कार्यकारणतश्चान्ये भवन्ति हितबुद्धयः ॥

अन्वयः—माता मित्रं पिता च इति त्रितयं स्वभावात् एव हितम् (भवति)। अन्ये च कार्यकारणतः हितबुद्धयः भवन्ति ।

हिन्दी-भाषा माता, पिता तथा मित्र —ये स्वभाव से ही हितकारी होते हैं । इनके अतिरिक्त अन्य लोग कार्य-कारण भाव से हितकर बनते हैं ।

तदस्माकं मित्रं हिरण्यको नाम मूषकराजो गण्डकीतीरे चित्रवने निवसति, सोऽस्माकं पाशांश्छेत्स्यतीत्यालोच्य सर्वे हिरण्यकविवरसमीपं गताः । हिरण्यकश्च सर्वदाऽपापशंकया शतद्वारं विवरं कृत्वा निवसति स्म ।

हिन्दी-भाषा --अतः हम लोग अपने मित्र चूहों का राजा हिरण्यक के निकट चलें, जो गण्डकी के किनारे चित्रवन में रहता है । वह हमारे जाल के बन्धन को काटकर हमें मुक्त करेगा ।

CC-O. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri | Sarayu Trust. Digitized by eGangotri | Bharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

इस प्रकार विचार करके सभी हिरण्यक के बिल के समीप गये। वह मूषक सदैव अनिष्ट की आशंका से बिल के सौ द्वार बनाकर उसमें निवास करता था।

ततो हिरण्यकः कपोतावपातभयाच्चकितस्तुष्णीं स्थितः।

चित्रग्रीव उवाच—'सखे हिरण्यक, किमस्मान्न संभाषसे ?'

ततो हिरण्यकस्तद्वचनं प्रत्यभिज्ञाय ससम्भ्रमे बिवरात् बहिर्निसृत्याब्रवीत्—'आ, पुण्यवानस्मि। यतो हि प्रियसुहृद् मे चित्रग्रीवः समायातः।'

हिन्दी-भाषा—तदनन्तर हिरण्यक कपोतों के भय से चकित तथा शान्त-चित्त स्थित रहा।

यह देख कर चित्रग्रीव ने कहा—'मित्र हिरण्यक' हम लोगों से क्यों नहीं बोल रहे हो ?

तत्पश्चात् हिरण्यक उसके वचनों को पहचान कर बिल से बाहर आकर कहने लगा—'अहा ! मैं बड़ा ही पुण्यात्मा हूँ, क्योंकि आज मेरे प्रिय मित्र चित्रग्रीव आये हैं।'

पश्चात् पाशवद्धांश्चैतान्दृष्ट्वा स विस्मयः, क्षणं स्थित्वोवाच—'सखे। किमेतत ? चित्रग्रीवोऽवदत्—सखे ! अस्माकं पूर्वजन्मकर्मणां फलमेतत।'

हिन्दी-भाषा—तदनन्तर हिरण्यक जाल में बँधे हुए अपने मित्र चित्रग्रीव तथा अन्य कपोतों को देखकर क्षण मात्र आश्चर्य चकित होकर कहने लगा—'मित्र यह क्या है ?'

चित्रग्रीव ने कहा—यह हमारे पूर्व जन्म के कर्मों का फल है।

एतत् श्रुत्वा हिरण्यकश्चित्रग्रीवं सान्त्वयन्नुवाच 'सखे चित्रग्रीव ! यथा भवद्भिरेकमत्यमाश्रित्य, तत्प्रभावेणैव महतीमापदं समुत्तीर्य मदीयमिदं स्थानञ्च समुपलब्धम, तथैवाग्रेपीदमेकमत्यं न कदाचन हेयम। एतदेव पुनां सर्वाङ्गीणं श्रेयः सम्पादयितुमलं भवतीति सर्वथा स्मरणीयम्।

हिन्दी-भाषा—अपने मित्र चित्रग्रीव की बातों को सुनकर हिरण्यक ने उन्हें सान्त्वना देते हुए कहा कि मित्र, जिस प्रकार आप लोगों ने एकता अपनाई और उसी के प्रभाव से इस विपत्ति को पार करके मेरा स्थान

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

प्राप्त किया, उसी प्रकार एकता को सदैव बनाये रखें, एकता को कभी न छोड़ें। यह एकता ही पुरुषों की सर्वाङ्गीण कल्याणकारिणी है—यह सर्वथा स्मरण रखें।

इत्युक्त्वा तस्यबन्धनं छेत्तुं सत्वरमुपसर्पति। चित्रग्रीव उवाच—'मित्र मैवम्। प्रथममस्मदाश्रितानामेषां तावत्पाशांश्छिन्धि, तदा मम पाशं पश्चाच्छेत्स्यसि।'

हिरण्यकोऽप्याह—'अहमल्पशक्तिः दन्ताश्च मे कोमलास्तदेतेषां सर्वेषां पाशांश्छेतुं कथं समर्थः स्याम्। तद्यावन्मेदन्ता न त्रुट्यन्ति, तावत्तव पाशं छिनद्मि। तदनन्तरमेषामपि बन्धनं यावच्छक्यं छेत्स्यामि।'

चित्रग्रीव उवाच—'अस्त्वेवम्, तथापि यथाशक्त्येतेषामेव बन्धनं प्रथमं खण्डय।'

हिरण्यकेनोक्तम्—आत्मपरित्यागेन यदाश्रितानां परिरक्षणं तन्न नीतिविदां सम्मतम्।

हिन्दी-भाषा—ऐसा कहकर वह हिरण्यक अपने मित्र चित्रग्रीव के जाल को काटने के लिए शीघ्रतापूर्वक उसके निकट गया। यह देखकर चित्रग्रीव ने कहा कि मित्र, ऐसा न करो। सर्वप्रथम मेरे आश्रित इन कपोतों का जाल काटो, तत्पश्चात् मेरा बन्धन काटना।

अपने मित्र की बात सुनकर हिरण्यक ने कहा कि मैं अल्पशक्ति हूँ। मेरे दाँत भी कोमल हैं। अतः मैं इनके बन्धन काटने में सर्वथा असमर्थ हूँ। फिर भी जब तक मेरे दाँत टूटते नहीं, तब तक तुम्हारे बन्धन को काटूँगा तत्पश्चात् शक्ति के अनुसार इनका भी बन्धन काटूँगा।

मित्र हिरण्यक की बातों को सुनकर कपोतराज चित्रग्रीव ने कहा ऐसा ही हो, फिर भी यथाशक्ति इनका ही बन्धन पहले काटो।

यह सुनकर हिरण्यक ने कहा कि अपना परित्याग करके अपने आश्रितों की रक्षा करना—नीतिकारों का सम्मत नहीं है।

आपदर्थे धनं रक्षेद्दारान् रक्षेद्धनैरपि।
आत्मानं सततं रक्षेद्दारैरपि धनैरपि॥

Sri Vidyabharati Book Trust, Bangalore

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

अन्वयः—आपदर्थे धनं रक्षेत्, धनैरपि दारान् रक्षेत्, दारैरपि धनैरपि सततम् आत्मानं रक्षेत् ।

हिन्दी-भाषा—आपत्ति काल के लिए धन की रक्षा करे, धन के द्वारा स्त्री की रक्षा करे तथा स्त्री और धन दोनों से अपनी रक्षा करे ।

चित्रग्रीव उवाच—**'सखे ! नीतिस्तावदीदृश्येव, किन्त्वहं स्वाश्रितानां दुःखं सोढुं सर्वथाऽसमर्थम् ।**

हिन्दी भाषा—चित्रग्रीव ने कहा—मित्र, नीति तो ऐसी ही है, परन्तु मैं अपने आश्रितो का दुःख सहन करने में सर्वथा असमर्थ हूँ ।

धनानि जीवितश्चैव परार्थे प्राज्ञ उत्सृजेत् ।
सन्निमित्ते वरं त्यागो विनाशे नियते सति ।।

अन्वयः—प्राज्ञः परार्थे एव धनानि जीवितच्च उत्सृजेत्, विनाशे नियते सति सन्निमित्ते त्यागः वरम् ।

हिन्दी भाषा—विद्वान् को चाहिए कि परोपकार के लिए वह धन और जीवन का त्याग करे । धन और जीवन का विनाश जब निश्चित है, तब अच्छे कार्य में उसका त्याग करना श्रेष्ठ है ।

इत्याकर्ण्य हिरण्यकः प्रहृष्टमना पुलकितः सन्नब्रवीत्—**'साधु मित्र ! साधु अनेनाश्रितवात्सल्येन त्रैलोक्यस्यापि प्रभुत्वं त्वयि युज्यते ।'**

एवमुक्त्वा तेन सर्वेषां बन्धनानि छिन्नानि । ततो हिरण्यकः सर्वान् सादरं सम्पूज्याह—**'सखे चित्रग्रीव ! सर्वथात्र जालबन्धनविधौ दोषमाशङ्क्य आत्मन्यवज्ञा न कर्त्तव्या ।'**

हिन्दी भाषा—मित्र चित्रग्रीव की बात सुनकर हिरण्यक प्रसन्न तथा पुलकित होकर बोला—'धन्य हो मित्र धन्य, आश्रितों के प्रति वात्सल्य के कारण तुम त्रयलोक के राजा बन सकते हो ।' ऐसा कहकर उसने सभी के बन्धनों को काट दिया ।

तदनन्तर हिरण्यक ने आदरपूर्वक सभी की पूजा करके कहा कि मित्र चित्रग्रीव, इस जाल बन्धन व्यापार में अपना दोष समझ कर अपने को अपमानित न समझना ।

CC-O. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri
CC-O. Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

शशिदिवाकरयोर्ग्रहपीडनं
गजभुजङ्गमयोरपि बन्धनम् ।
मतिमतां च विलोक्य दरिद्रतां
विधिरहो बलवानिति मे मति ॥

अन्वयः - शशिदिवाकरयोः ग्रहपीडनं, गजभुजङ्गमयोः अपि बन्धनं मतिमतां दरिद्रतां च विलोक्य 'अहो ! विधिः बलवानिति' मे मतिः (भवति) ।

कठिनशब्दार्थाः-शशिदिवाकरयाः = चन्द्रसूर्ययोः । गजभुजंगमयोः = हस्तिसर्पयोः । मतिमताम् = बुद्धिमताम् ।

हिन्दी-भाषा—चन्द्रमा-सूर्य का राहु द्वारा ग्रसित होना, हाथी और सर्प का बँधा जाना तथा बुद्धिमानों का दरिद्र होना देखकर मैं तो यही समझता हूँ कि भाग्य ही प्रबल है ।

इति प्रबोध्यातिथ्यं कृत्वाऽऽलिङ्ग्य च चित्रग्रीवस्तेन सम्प्रेषितो यथेष्टं देशान् सपरिवारो ययौ । हिरण्यकोऽपि स्वविवरं प्रविष्टः ।

हिन्दी-भाषा—इस प्रकार हिरण्यक ने सान्त्वना देकर तथा आलिङ्गन करके चित्रग्रीव को भेज दिया और कपोत राज परिवार के साथ यथेष्ट स्थान को चला गया और हिरण्यक अपने बिल में ।

यानि कानि च मित्राणि कर्त्तव्यानि शतानि च ।
पश्य मूषकमित्रेण कपोताः मुक्तबन्धनाः ।

अन्वय—यानि कानि च शतानि मित्राणि कर्त्तव्यानि, पश्य कपोताः मूषकमित्रेण मुक्तबन्धनाः (बभूवुः) ।

हिन्दी-भाषा—निर्बल या सबल किसी भी प्रकार का सैकड़ों मित्र बनाना चाहिए, देखो-एक मूषक मित्र ने अनेक कपोतों को मुक्त कर दिया ।

अथ लघुपतनकनामा काकः तयोर्मिथः सञ्जायमानस्य सर्ववृत्तान्तस्य दर्शी हिरण्यकसमीपं गत्वा साश्चर्यमिदमाह 'अहो हिरण्यक ! श्लाघ्योऽसि सर्वथा सङ्गमनीथोऽसि । अतोऽहमपि त्वया सह मैत्रीमिच्छामि । अतश्च मामपि मैत्र्येणानुग्रहीतुमर्हसि ।'

CC-O. Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

एतत् श्रुत्वा हिरण्यकोऽपि विवराभ्यन्तरादाह—'कस्त्वम् ।'

स ब्रूते 'लघुपतनकनामा वायसोऽहम् ।'

हिरण्यको विहस्याह-का त्वया सह मैत्री ? यतः—

हिन्दी-भाषा—तदनन्तर इस घटना का प्रत्यक्षदर्शी लघुपतनक नामक कौवा, हिरण्यक नामक मूषक के निकट जाकर आश्चर्यपूर्वक बोला—हिरण्यक, तुम सर्वथा श्लाघ्य तथा मित्रता के योग्य हो। अतः मैं भी तुम्हारे साथ मैत्री करना चाहता हूं।

लघु पतनक की बात सुनकर बिल के भीतर से ही हिरण्यक ने कहा कि 'तुम कौन हो ? उसने कहा—मैं लघु पतनक नामक कौवा हूँ।

हिरण्यक ने हँस कर कहा—तुम्हारे साथ मित्रता कैसी ? क्योंकि—

भक्ष्यभक्षकयोः प्रीतिर्विपत्तिरेव कारणम् ।
शृगालात्पाशबद्धोऽसौ मृगः काकेन रक्षितः ॥

अन्वयः—भक्ष्यभक्षकयोः प्रीतिः विपत्तेरेव कारणं (भवति)। शृगालात् पाशबद्धः असौ मृगः काकेन रक्षितः।

हिन्दी-भाषा—भक्ष्य और भक्षक की मित्रता विपत्ति का कारण होती है, जैसे शृगाल के कारण जाल में फँसे हुए उस मृग की कौवे ने रक्षा की।

वायसोऽब्रवीत्—कथमेतत् ?

हिरण्यकः कथयति।

हिन्दी-भाषा—लघुपतनक ने पूछा—यह कैसे ? यह सुनकर हिरण्यक कहता है।

मृग-शृगालस्य कथा

अस्ति मगध देशे चम्पकवती नामाऽरण्यानि। तस्यां चिरान्महता स्नेहेन मृगरक्तौ निवसतः। स च मृगः स्वेच्छया भ्राम्यन् हृष्टपुष्टाङ्गः केनचिच्छृगालेनावलोकितः। तं दृष्ट्वा शृगालोऽचिन्तयत्—'आः कथमेतन्मांसं सुललितं भक्षयामि ? भवतु, विश्वासं तावदुत्पादयामि।' इत्यालोच्य उपसृत्याब्रवीत्—'मित्र ! कुशलं ते ?

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

मृगेणोक्तम्—'कस्त्वम् ?'

स ब्रूते—'क्षुद्रबुद्धिजम्बुकोऽहम् । अत्रारण्ये बन्धुहीनो मृतवन्निवसामि । इदानीं त्वां मित्रमासाद्य पुनः सबन्धुर्जीवलोके प्रविष्टोऽस्मि । अधुना तवानुचरेण मया सर्वथा भवितव्यम् ।'

मृगेणोक्तम् 'एवमस्तु ।'

ततः पश्चादस्तङ्गते सवितरि भगवति मरीचिमालिनि तौ मृगस्य वासभूमिं गतौ । तत्र चम्पकवृक्षशाखायां सुबुद्धिनामा काको मृगस्य चिरमित्रं निवसति स्म । तौ दृष्ट्वा काकोऽवदत—'सखे चित्राङ्ग ! कोऽयं द्वितीयः ?

मृगो ब्रूते—जम्बुकोऽयमस्मत्सख्यमिच्छन्नागतः ।'

काको ब्रूते अज्ञातकुलशीलेन अकस्मादागन्तुना सह मैत्री न युक्ता । तथाचोक्तम् —

हिन्दी-भाषा—मगध देश में चम्पकवती नामक एक वन है, उसमें बहुत समय से अत्यन्त स्नेहपूर्वक मृग और कौवा निवास करते थे । किसी समय एक शृगाल ने स्वेच्छापूर्वक विचरण करने वाले उस हृष्ट-पुष्ट मृग को देखा और अपने मन में सोचा कि इसका सुन्दर मांस किस प्रकार खाऊँगा । अच्छा, सर्व प्रथम मैं उसे अपना विश्वास उत्पन्न कराऊँ ।

ऐसा सोचकर वह शृगाल उस मृग के निकट जाकर बोला—'मित्र, तुम सकुशल हो ?'

मृग ने कहा—तुम कौन हो ?

शृगाल ने कहा—मैं क्षुद्र बुद्धि नामक शृगाल हूँ । इस वन में बन्धु हीन मैं मृतकवत् निवास करता हूँ । इस समय मैं तुम्हें मित्र रूप में पाकर बन्धु युक्त हो गया हूँ । अब मैं तुम्हारा अनुचर बनकर रहूँगा ।

शृगाल की बात सुनकर मृग ने कहा—'ऐसा ही होवे ।'

तत्पश्चात् भगवान् सूर्य के अस्त होने पर वे दोनों मृग के निवास स्थान पर गये, चम्पा की शाखा पर मृग का प्राचीन मित्र सुबुद्धि नामक कौवा रहता था । उन दोनों को देखकर उसने पूछा—'मित्र चित्राङ्ग, यह दूसरा कौन है ?

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

मृग ने कहा—यह शृगाल है, मुझसे मित्रता की इच्छा से आया है।

कौवे ने कहा—मित्र, कुल और शील जाने बिना अचानक आगन्तुक के साथ मित्रता उचित नहीं है, क्योंकि कहा गया है—

अज्ञातकुलशीलस्य वासो देयो न कस्यचित्।
माजरिस्य हि दोषेण हतो गृध्रो जरद्गवः॥

अन्वयः अज्ञातकुलशीलस्य कस्यचित् वासो न देयः। हि माजरिस्य दोषेण जरद्गवः गृध्रः हतः।

हिन्दी-भाषा—किसी भी अज्ञात कुल शील को घर में स्थान नहीं देना चाहिए, क्योंकि ऐसे ही अज्ञात कुलशील माजरि को स्थान देने के कारण वृद्ध जरद्गव गृध्र मारा गया।

तावाहतुः – कथयेतत् ?

काकः कथयति।

हिन्दी-भाषा—मृग शृगाल दोनों ने पूछा—यह कैसे ?

यह सुनकर कौवा कहता है।

वृद्धजरद्गवगृध्र-विडालस्य कथा

अस्ति भागीरथीतीरे गृध्रकूटनाम्निपर्वते महान् पर्कटीवृक्षः। तस्य कोटरे दैवदुर्विपाकाद् गलितनखनयनो निजाहारमप्युपार्जयितुमसमर्थो जरद्गवनामा गृध्रः प्रतिवसति स्म। अथ कृपया तज्जीवनाय तद्वृक्षवासिनः पक्षिणः स्वाहारात्किञ्चिदुद्धृत्य तस्मै ददति स्म, तेनासौ जीवति स्म, तेषां शाबकानां रक्षाञ्च करोतिस्म। अथ कदाचिद् दीर्घकर्णनामा मार्जार पक्षिशावकान् भक्षयितुं तत्रागतः। ततस्तमायान्तं दृष्ट्वा पक्षिशाबकैर्भयार्तैः कोलाहलः कृतः। तत् श्रुत्वा जरद्गवेनोक्तम् — 'कोऽयमायाति ?' दीर्घकर्णो गृध्रमवलोक्य सभयमाह— हा हतोस्मि। अधुनाऽस्य सन्निधात् पलायितुमक्षमः। नीतिस्तु तावदिदमेव कथयति

हिन्दी भाषा – गंगा के तट पर गृध्रकूट नामक पर्वत पर बहुत बड़ा पाकड़ का वृक्ष है। उसके कोटर में दुर्भाग्य वश गलित नख-नयन स्वकीय भोजनोपार्जन में भी असमर्थ जरद्गव नामक वृद्ध गृध्र रहता था। उस वृक्ष

Sri Vidyabharathi Book Centre, Srirangam

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

पर निवास करने वाले अन्य पक्षी उसके ऊपर कृपा करके अपने आहार में से थोड़ा-थोड़ा निकाल कर उसे जीवनार्थ देते थे और वह उनके बच्चों की रक्षा करता था।

एक दिन दीर्घकर्ण नामक विडाल पक्षियों के बच्चों को खाने के लिए वहाँ आया, जिसे देखकर भयभीत बच्चों ने कोलाहल किया। यह सुनकर वृद्ध जगद्गुरु ने कहा—'यह कौन आ रहा है ?'

दीर्घकर्ण नामक विडाल गृध्र को देखकर भयाक्रान्त होकर सोचने लगा—'हाय, अब मैं मारा गया। इस समय तो मैं इसके निकट से भाग भी नहीं सकता, परन्तु नीति कहती है—

तावद् भयस्य भेतव्यं यावद् भयमनागतम्।
आगतं तु भयं वीक्ष्य नरः कुर्याद्यथोचितम्॥

अन्वयः—यावत् भयम् अनागतं (भवति)। तावत् भयस्य भेतव्यम्। नरः भयम् आगतं वीक्ष्य यथोचितं कुर्यात्।

हिन्दी-भाषा—भय से तभी तक डरना चाहिए, जब तक भय प्राप्त नहीं है, भय को उपस्थित देखकर मनुष्य उसका यथोचित प्रतिकार करे।

अतो यद् भवितव्यं तद् भवतु। तावद्विश्वासमुत्पाद्यास्य समीपमुपगच्छामि। इत्यालोच्यावदत्—'आर्य! त्वामभिवन्दे।'

गृध्रोऽवदत्—'कस्त्वम् ?'

सोऽवदत्—मार्जारोऽहम्।

गृध्रो ब्रूते—दूरमपसर, नो चेत् हन्तव्यो मया।

मार्जारोऽवदत्—श्रूयताम् तावद् मम वचनम् ततो यद्यहं वध्यस्तदा हन्तव्यः। यतः—

हिन्दी-भाषा—अतः जो होना होगा, वह होवे। ऐसा सोचकर वह विडाल गृध्र के निकट जाकर बोला—'आर्य, मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ।

गृध्र ने कहा—'तुम कौन हो ?'

दीर्घकर्ण ने कहा कि मैं विडाल हूँ।

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

गृध्र ने कहा कि 'दूर हटो, अन्यथा तुम मेरे द्वारा मारे जाओगे।'

विडाल ने कहा—पहले मेरा वचन सुन लीजिए, पश्चात् यदि मैं मारने योग्य होऊँ, तब मारिएगा। क्योंकि—

जातिमात्रेण किं कश्चिद्धन्यते पूज्यते क्वचित्।
व्यवहारं परिज्ञाय वध्यः पूज्योऽथवा भवेत्॥

अन्वयः क्वचित् कश्चित् जातिमात्रेण हन्यते पूज्यते किम्? व्यवहारं परिज्ञाय एव वध्यः अथवा पूज्यः भवेत्।

हिन्दी-भाषा— क्या कहीं कोई जाति के कारण मारने योग्य या पूजा योग्य होता है? केवल व्यवहार के द्वारा ही प्राणी मारने योग्य या पूज्य बनता है।

गृध्रो ब्रूते—'ब्रूहि किमर्थमागतोऽसि?'

सोऽवदत्—अहमत्र गंगातीरे नित्यस्नायी निरामिषाशी ब्रह्मचारी चन्द्रायणव्रतमाचरंस्तिष्ठामि। यूयं धर्मज्ञानरता अतो विश्वास मुपपश्चेत्यत्रत्याऽऽह सर्वे पक्षिणः सर्वदा मग्रे स्तुवन्ति। अतो भवद्भ्यो विद्यावयोवृद्धेभ्यो धर्म श्रोतुमिहागतः। भवन्तश्चैतादृशा धर्मज्ञा यन्मामतिथिं हन्तुमुद्यताः। गृहस्थधर्मश्चैषः। यदि धनं नास्ति, तदा प्रीतिवचसैव वाऽतिथिः पूज्य एव।

हिन्दी-भाषा गृध्र ने विडाल से कहा— तुम्हारे आने का कारण क्या है?

विडाल ने कहा कि यहाँ मैं नित्य प्रति गंगा में स्नान करके निरामिष भोजन करनेवाला, ब्रह्मचारी तथा चन्द्रायण व्रत में लीन हूँ। मेरे समक्ष सभी पक्षी आप के धर्म ज्ञान की सदैव प्रशंसा करते हैं। अतः आप ऐसे धर्मात्मा हैं कि मुझ अतिथि को ही मारने के लिए उद्यत हैं। गृहस्थ का तो यह धर्म है कि यदि घर में धन नहीं है तो आगन्तुक अतिथि का प्रिय वचनों से ही सत्कार करना चाहिए।

तृणानि भूमिरुदकं वाक्चतुर्थी च सूनृता।
एतान्यपि सतां गेहे नोच्छिद्यन्ते कदाचन॥

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

अन्वयः—तृणानि भूमिः उदकं चतुर्थी सुनृता वाक् च एतानि अपि सतां गेहे कदाचन नोच्छिद्यन्ते ।

कठिनशब्दार्थाः—नोच्छिद्यन्ते न विनश्यन्ति ।

हिन्दी-भाषा—तृण, स्थान, जल तथा प्रिय एवं सत्य बात—ये चारों सज्जनों के घर कभी विनष्ट नहीं होते, सदैव बने रहते हैं ।

गृध्रोऽवदत्—'मार्जारो हि मांसरुचिः, पक्षिशावकाश्चात्र निवसन्ति, तेनाहमेवं ब्रवीमि ।' तत् श्रुत्वा मार्जारो भूमिं स्पृष्ट्वा कर्णौ स्पृशति, ब्रूते च—मया धर्मशास्त्रं श्रुत्वा वीतरागेणेदं दुष्करं व्रतं चान्द्रायणमव्यवसितम् । परस्परं विवादमानानामपि धर्मशास्त्राणामहिंसा परमो धर्मः, इत्यत्रैकमत्यम् ।

हिन्दी-भाषा—विडाल की बातों को सुनकर गृध्र ने कहा कि विडाल को मांस बहुत ही प्रिय है और यहाँ पक्षियों के बच्चे रहते हैं । इसी से मैं तुम्हें यहाँ से दूर जाने के लिए कहता हूँ ।

गृध्र की बातों को सुनकर विडाल ने भूमि को स्पर्श करके कानों को पकड़कर कहा कि मैंने धर्म शास्त्र सुनकर विरक्त होने के कारण कठिन चान्द्रायण व्रत किया है । धर्म शास्त्र की अन्य बातों में विवाद होते हुए भी 'अहिंसा परमो धर्मः' इस बात को एक मत होकर सभी ने स्वीकार किया है ।

अहिंसा परमो धर्मस्तथाऽहिंसा परो दमः ।
अहिंसा परमं दानमहिंसा परमं तपः ॥

अन्वयः—अहिंसा परमः धर्मः परः दमः अहिंसा परमं दानम् तथा अहिंसा परमं तपः ।

हिन्दी-भाषा—अहिंसा सबसे बड़ा धर्म है, अहिंसा सबसे बड़ा दम (इन्द्रिय दमन) है, अहिंसा सबसे बड़ा दान है तथा अहिंसा सबसे बड़ा तप है ।

इत्येवं कथमपि विश्वास्य स मार्जारस्तरुकोटरे स्थितः । ततो दिनेषु गच्छत्सु असौ पक्षिशावकानाकस्य कोटरात्तेषु अहःसु खादति । येषामपत्यानि

Sri Vidyabharathi Book Collection, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

खादितानि तैः शोकार्त्तैर्विलपद्भिरितस्ततो भक्षयितुर्गवेषणा समारब्धा। तत्परिज्ञाय मार्जारः कोटरान्निसृत्य बहिः पलायितः। पश्चात्पक्षिभिरितस्ततो निरूपयद्भिस्तत्र तरुकोटरे शावकास्थीनि प्राप्तानि। अनन्तरं 'अनेनैव जगद्गवेनास्माकं शावकाः खादिताः, इति सर्वैः पक्षिभिर्निश्चित्य स गृध्रो व्यापादितः। अतोऽहं ब्रवीमि—'अज्ञातकुलशीलस्य वासो देयो न कस्यचित्।'

हिन्दी-भाषा—इस प्रकार विडाल अपने वचनों से गृध्र को विश्वास दिलाकर वृक्ष के कोटर में रहने लगा। तदनन्तर वह कुछ समय व्यतीत होने पर पक्षि शावकों पर आक्रमण करके उन्हें अपने कोटर में रखकर प्रतिदिन खाने लगा। जिनके बच्चों को उसने खा लिया, वे दुखित होकर रोते हुए अपने बच्चों के खाने वाले को इधर-उधर खोजने लगे। जब विडाल को यह ज्ञात हुआ, तब वह उस कोटर से निकल कर भाग गया। तदनन्तर पक्षियों ने इधर-उधर खोजते हुए उस वृक्ष के कोटर में बच्चों की हड्डियाँ प्राप्त कीं। अतः, सभी पक्षियों ने यह निश्चित किया कि 'इसी जरद्गव ने हमारे बच्चों को खाया है।' अतः सभी पक्षियों ने उसे मार डाला। अतः मैं कहता हूँ कि अज्ञात कुल शील को कभी निवास नहीं देना चाहिए।

इत्याकर्ण्य स वञ्चकः सकोपमाह—'मृगस्य प्रथमदर्शनदिने भवानप्यज्ञातकुलशील एव आसीत्। तत्कथं भवता सहैवास्य स्नेहानुवृत्तिरुत्तरोत्तरं वर्द्धते?

हिन्दी-भाषा—यह सुनकर क्रोधपूर्वक उस शृगाल ने कहा—जब प्रथम दिन मृग से आपकी भेंट हुई थी, उस समय उसके लिए भी आप 'अज्ञात कुल शील' ही थे, तब कैसे आपके साथ इसका स्नेह उत्तरोत्तर बढ़ता जा रहा है?

अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्॥

अन्वयः—अयं निजः परः वा इति गणना लघुचेतसाम्, उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।

CC-O. Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

हिन्दी-भाषा—यह मेरे हैं और वह दूसरे हैं—ऐसा विचार क्षुद्र बुद्धि वाले करते हैं, उदार चित्त वालों के लिए तो यह पृथ्वी ही कुटुम्ब है।

यथा चायं मृगो मम बन्धुस्तथा भवानपि।
मृगोऽब्रवीत्— किमनेनोत्तरप्रत्युत्तरेण ?'
सर्वैरेकत्र विश्रम्भालापैः सुखमनुभवद्भिः स्थीयताम्।

हिन्दी-भाषा—जिस प्रकार यह मृग मेरा बन्धु है, उसी प्रकार आप भी मेरे बन्धु हैं।

यह सुनकर मृग ने कहा कि इस प्रकार के उत्तर-प्रत्युत्तर से क्या लाभ ? हम सभी एक स्थान पर विश्वास पूर्वक बातचीत करते हुए निवास करें।

काकेनोक्तम्—'एवमस्तु।'

अथ प्रातः सर्वे यथाभिमतदेशं गताः।

एकदा निभृतं भृगालो ब्रूते —'सखे मृग ! अस्मिन्वनैकदेशे सस्यपूर्णक्षेत्रमस्ति, तदहं त्वां नीत्वा दर्शयामि।'

तथा कृते सति मृगः प्रत्यहं तत्र गत्वा सस्यं खादति। अथ दिनकतिपयेन क्षेत्रपतिना तद् दृष्ट्वा पाशाः योजिताः। अनन्तरं पुनरागतश्चरन् मृगस्तत्र पार्श्वबद्धोऽचिन्तयत्— 'को मामितः कालपाशादिव व्याधपाशात् त्रातुं मित्रादन्यः समर्थः।

अत्रान्तरे जम्बुकस्तत्रागत्योपस्थितोऽचिन्तयत्-'फलितस्तावदस्माकं कपटप्रबन्धः, मनोरथसिद्धिरपि प्रायो मे भविष्यति। एतस्योत्कृत्यमानस्य मांसाऽसृग्लिप्तान्यस्थीनि मयाऽवश्यं प्राप्तव्यानि। तानि बाहुल्येन भोजनानि भविष्यन्ति।'

मृगस्तं दृष्ट्वोल्लसितो ब्रूते—सखे ! छिन्धि तावन्मम बन्धनम् सत्वरं त्रायस्व माम्। यतः—

हिन्दी-भाषा—मृग की बातों को सुनकर कौवे ने कहा—'ऐसा ही हो।' तदनन्तर प्रातः काल सभी अभीष्ट स्थान को गये।

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

एक दिन शृगाल ने एकांत में मृग से कहा कि 'मित्र, इस वन के एक भाग में धानों से भरा हुआ एक खेत है। मैं तुम्हें वह खेत दिखाऊँगा।' तदनन्तर वह मृग प्रतिदिन वहाँ जाकर धान खाने लगा। कुछ दिनों के उपरान्त खेत के मालिक ने मृग को देखकर जाल फैला दिया। तत्पश्चात् वह मृग पुनः वहाँ आया और धान चरता हुआ उस जाल में फँस गया। उसने मन में सोचा कि 'काल पाश के समान इस व्याध के पाश से मुक्त करने के लिए मेरे मित्र शृगाल के अतिरिक्त अन्य कौन समर्थ है ?

इसी बीच वह शृगाल वहाँ उपस्थित होकर सोचने लगा कि 'मेरी कपट नीति सफल हो गई, अब मेरा मनोरथ सिद्ध होगा। अब मुझे मांस और रक्त से सनी हुई हड्डियाँ भोजन के लिए अवश्य मिलेंगी। अब मुझे पर्याप्त भोजन मिलेगा।

मृग, अपने मित्र शृगाल को देखकर प्रसन्न चित्त होकर कहने लगा कि 'मित्र, मेरे बन्धन को काटो और शीघ्र मेरी रक्षा करो।' क्योंकि—

आपत्सु मित्रं जानीयाद् युद्धे शूरमृणे शुचिम्।
भार्यां क्षीणेषु वित्तेषु व्यसनेषु च बान्धवान्॥

अन्वयः—आपत्सु मित्रम्, युद्धे शूरम्, ऋणे शुचिम्, क्षीणेषु वित्तेषु भार्याम् व्यसनेषु च बान्धवान् जानीयात्।

हिन्दी भाषा—आपत्ति के समय मित्र की, युद्ध काल में वीर की, ऋण लेते-देते समय पवित्रता की, धन क्षीण होने पर स्त्री की तथा विपत्ति के समय बन्धु-बान्धवों की परीक्षा होती है।

जम्बुको मुहुर्मुहुः पाशं विलोक्याचिन्तयत् - दृढ़बन्धनबद्धोऽस्ति तावद्वयं मृगः। ब्रूते च - सखे! स्नायुर्निर्मिता ऐते पाशाः। तदत्र भट्टारकरविवासरे कथमेतान्दन्तैः स्पृशामि। मित्र, यदि चित्तं नान्यथा भन्यसे, तदा प्रभाते यत्त्वया वक्तव्यं तत्कर्त्तव्यम्' इत्युक्त्वा तत्समीपे आत्मानमाच्छाद्यः स्थितः।

अनन्तरं स काकः प्रदोषकाले मृगमनागतमवलोक्येतस्ततोऽन्विष्य तथाविधं तं दृष्ट्वोवाच - सखे! किमेतत्?

Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

मृगेणोक्तम्—अवधीरितसुहृद्वाक्यस्य फलमेतत् ।' तथा चोक्तम्—

हिन्दी-भाषा—शृगाल बार-बार जाल को देखकर सोचने लगा कि यह दृढ़ बन्धनों से बँधा हुआ है ।

इसने कहा—'मित्र, तातों से बना हुआ यह जाल है । आज भगवान् सूर्य के दिन रविवार को इन तातों को दाँतों से कैसे स्पर्श करूँ ? अतः मित्र, यदि तुम मन में अन्य किसी प्रकार का विचार न करो, तो प्रातः काल जो तुम कहोगे, वही मैं करूँगा ।'

ऐसा कहकर वह शृगाल उसके निकट ही अपने को छिपाकर स्थित हो गया ।

तदनन्तर वह कौवा सायंकाल अपने मित्र मृग को स्थान पर न आया हुआ देख कर इधर-उधर खोज कर इस प्रकार उसे बद्ध देखकर बोला—'मित्र यह क्या ?'

मृग ने कहा—मित्र की बात को न मानने का यह फल है । जैसे कहा भी गया है—

सुहृदां हितकामानां यः शृणोति न भाषितम् ।
विपत्सन्निहिता तस्य स नरः शत्रुनन्दनः ॥

अन्वयः—यः हितकामानां सुहृदां भाषितम् न शृणोति, तस्य विपत् सन्निहिता । स नरः शत्रुनन्दनः (भवति) ।

कठिनशब्दार्थाः—शत्रुनन्दनः = शत्रुणामानन्दजनकः ।

हिन्दी-भाषा—जो मनुष्य अपने हितैषी मित्रों की बातें नहीं सुनते, वे विपत्ति के निकट होते हैं और अपने शत्रुओं को प्रसन्न करने वाले होते हैं ।

काकः कथयति—स वञ्चकः क्वास्ते ?

मृगेणोक्तम्—मन्मांसार्थी तिष्ठत्यत्रैव ।

काको ब्रूते—मित्र ! उक्तमेव मया पूर्वम्—

हिन्दी-भाषा—कौवें ने पूछा—वह वाचक शृगाल कहाँ है ?

मृग ने कहा—मेरे मांस की कामना करने वाला यहीं बैठा है ।

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

कौवे ने कहा—मित्र, मैंने पहले ही कहा था—

परोक्षे कार्यहन्तारं प्रत्यक्षे प्रियवादिनम् ।
वर्जयेत्तादृशं मित्रं विषकुम्भं पयोमुखम् ॥

अन्वयः—परोक्षे कार्यहन्तारं प्रत्यक्षे प्रियवादिनं तादृशं मित्रं पयोमुखं विषकुम्भम् इव वर्जयेत् ।

हिन्दी-भाषा—परोक्ष में कार्य बिगाड़ने वाले प्रत्यक्ष में प्रिय वचन बोलने वाले ऊपर दूध भरे हुए विष के घड़े के समान त्याग देना चाहिए ।

ततो काकः दीर्घं निश्वस्य आह—'अरे वञ्चक ! किं त्वया पापकर्मणा कृतम् ?

हिन्दी-भाषा—तदनन्तर कौवा ऊँची साँस लेकर बोला—अरे कपटी, तूने यह क्या पाप कर्म किया ?

अथ प्रभाते क्षेत्रपतिर्लगुडहस्तस्तं प्रदेशमागच्छन् काकेनावलोकितः । तमवलोक्य काकेनोक्तम्—'सखे मृग ! त्वमात्मानं मृतवत् संदर्श्य वातेनोदरं पूरयित्वा पादान् स्तब्धीकृत्य तिष्ठ । अहं तव चक्षुषी चञ्चवा विलिखामि । यदाऽहं शब्दं करोमि, तदा त्वमुत्थाय सत्वरं पलायिष्यसे ।' मृगस्तथैव काक-वचनेन स्थितः ।

हिन्दी-भाषा—तदनन्तर कौवे ने प्रातः काल खेत के मालिक को हाथ में दण्डा लेकर आते हुए देखा । उसने उसे देखकर अपने मित्र से कहा कि 'मित्र मृग, तुम अपने को मृतवत् बनाकर हवा से अपने पेट को फुलाकर पैरों को निश्चल करके पड़ जाओ । मैं तुम्हारी आँखों को चोंच से खोदूँगा । जब मैं शब्द करूँगा, तब तुम उठकर शीघ्र भाग जाना ।'

मित्र कौवा के वचनानुसार वह मृग वैसे ही स्थित हो गया ।

ततः क्षेत्रपतिना हर्षोत्फुल्ललोचनेन तथाविधो मृग आलोकितः । 'आः स्वयं मृतोऽसि' इत्युक्त्वा मृगं बन्धनान्मोचयित्वा पाशान्संवरीतुं सयत्नो बभूव । ततो कियद् दूरमन्तरिते क्षेत्राधिपे काकशब्दं श्रुत्वा स मृगः सत्वरमुत्थाप पलायितः, तमुद्देश्य तेन क्षेत्रपतिना प्रकोपात् क्षिप्तेन लगुडेन शृगालो हतः ।

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

अतोऽहं ब्रवीमि—

भक्ष्यभक्षकयोः प्रीतिर्विपत्तेरेव कारणम् ।

हिन्दी-भाषा—तदनन्तर खेत को मालिक ने प्रसन्नतापूर्वक मृग को देखा और कहा कि 'आह ! यह तो स्वयं ही मर गया है ।' ऐसा कहकर उस मृग को बन्धनों से मुक्त करके जाल समेटने का प्रयत्न करने लगा । तत्पश्चात् उस मालिक के कुछ दूर चले जाने पर कौवे के शब्द को सुनकर वह मृग शीघ्रता से उठकर भाग गया । जब खेत के मालिक ने क्रोधपूर्वक उसे मारने के लिए दण्डा फेंका, तो वह शृगाल को लगा, जिससे वह मर गया । इसी से मैं कहता हूँ—

'भक्ष्य और भक्षक की प्रीति विपत्ति का कारण होती है ।'

काकः पुनराह—अहमभिन्नहृदयं मित्रं भूत्वा सर्वथा ते साहाय्यमाचरिष्यामि । हिरण्यको ब्रूते—चपलस्त्वम् । चपलेन सह स्नेहः सर्वथा न कर्त्तव्यः लघुपतनको ब्रूते—श्रुतं मया सर्वम्, तथापि मम चेतावान्संकल्पः यत्त्वया सह सौहार्दमवश्यं करणीयम् । नो चेत्प्रायोपवेशनं कृत्वाऽत्मानं व्यापादयामि । एतैर्गुणैरुपेतो भवदन्यो मया कः सुहृद् प्राप्तव्यः ?

तद्वचनमाकर्ण्य हिरण्यको विवरात् बहिः निसृत्याह—'अहो ! अप्यायितोऽनेन वचनामृतेन । तद् भवतु भवतोऽभिमतमेवेत्युक्त्वा हिरण्यको मैत्रं विधाय भोजनविशेषैर्वायसं सन्तोष्य स्वविवरं प्रविष्टः । वायसोऽपि स्वस्थानं गतः । ततः प्रभृति तयोरन्योन्याहारप्रदानेन कुशलप्रश्नैः विश्रम्भालापैश्चकालोऽतिवर्ततेस्म ।

हिन्दी-भाषा—लघुपतनक नामक कौवे ने पुनः कहा—मैंने सभी बातें सुनी, फिर भी मेरा संकल्प है कि तुम्हारे साथ मित्रता अवश्य करनी चाहिए । यदि ऐसा नहीं हुआ, तो मैं निराहार रहकर अपना प्राण त्याग दूँगा । ऐसे गुणों से युक्त आपके अतिरिक्त मित्र मुझे कहाँ मिलेगा ?

लघुपतनक की बातों को सुनकर हिरण्यक बिल से बाहर आकर बोला—'अहा आपने अमृत वचनों से मुझे तृप्त कर दिया । तब

CC-O. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri
की इच्छा के अनुसार ही हो' ऐसा कहकर वह उससे मित्रता करके भोजन विशेष से सन्तुष्ट करके अपने बिल ये प्रवेश कर गया और वह वा भी अपने स्थान को चला गया। उसी दिन से दोनों एक दूसरे को हार आदान प्रदान करके कुशलता की बातें करते हुए बिश्वास पूर्वक समय ीत करने लगे।

एकदा लघुपतनकको हिरण्यकमाह – 'कष्टतरलभ्याऽऽहारमिदं स्थानं ्रति सञ्जातम, तदिदं परित्यज्य स्थानान्तरं गन्तुमिच्छामि।'

हिरण्यको ब्रूते – 'मित्र' तर्हि क्व गन्तव्यम्, स्थानान्तरमनिश्चित्याधिष्ठत-नं न त्याज्यम्' तथा चोक्तम्।

हिन्दी-भाषा—एक दिन लघुपतनक ने कहा कि मित्र, इस स्थान पर जन बड़े ही कष्ट से प्राप्त होता है। अतः इस स्थान को छोड़कर दूसरे न को जाना चाहता हूँ।

हिरण्यक ने कहा—मित्र कोई दूसरा स्थान निश्चित किये बिना प्रथम न को नहीं छोड़ना चाहिए, क्योंकि कहा गया है—

चलत्येकेन पादेन तिष्ठत्येकेन बुद्धिमान्।
न समीक्ष्य परं स्थानं पूर्वमायतनं त्यजेत्॥

अन्वयः – बुद्धिमान् एकेन पादेन चलति, एकेन तिष्ठति, परम् स्थानम् मीक्ष्य पूर्वम् आयतनम् न त्यजेत्।

हिन्दी-भाषा—बुद्धिमान् एक पैर से चलता है और दूसरे पैर से स्थिर ता है। वह दूसरे स्थान को बिना देखे-समझे पहला स्थान न छोड़े।

वायसो ब्रूते—'मित्र! सत्यमेतत्। अस्ति सुनिरूपितं स्थानम्।

ण्यकोऽवदत् किं तत्?

वायसो ब्रूते—अस्ति दण्डकारण्ये कर्पूरामिधानं सरः, तत्र चिरकालो-जितः प्रियसुहृन्मे मन्थरामिधानं कच्छपो धार्मिकः प्रतिवसति। स च जनविशेषैरावां संवर्द्धयिष्यति।

हिरण्यकोऽप्याह—'यद्येवं तत्किमत्रावस्थाय मयाऽपि कर्त्तव्यम्?' यतः—

हिन्दी-भाषा लघुपतनक ने कहा कि मित्र, दण्डक वन में कर्पूर गौर मक एक तालाब है। वहाँ मेरा एक प्राचीन प्रिय मित्र मन्थर नामक

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri
कच्छप है, जो स्वभावतः धार्मिक है। वह विशिष्ट भोजन देकर हम दोनों को पुष्ट करेगा।

हिरण्यक ने कहा कि यदि ऐसी बात है, तो मैं भी यहाँ रहकर क्या करूँगा ? क्योंकि—

यस्मिन्देशे न सम्मानं न वृत्तिर्न च बान्धवाः।
न च विद्यागमः कश्चित्तं देशं परिवर्जयेत् ॥

अन्वयः—यस्मिन् देशे सम्मानं न, वृत्तिः न, बान्धवाः न, कश्चित् विद्यागमः न, तं देशं परिवर्जयेत्।

हिन्दी-भाषा—जिस देश में सम्मान न हो, जीविका न हो, बन्धुजन न हो, किसी विद्या का आगम न हो, उस देश को छोड़ देना चाहिए।

ततो यथेच्छं शुभेऽह्नि गच्छावस्तत्र। अथ वायसस्तेन मित्रेण सह विचित्रालापैः सुखेन तस्य सरसः समीपे ययौ। ततो मन्थरो दूरादवलोक्य लघुपतनकस्य यथोचितमातिथ्यं विधाय मूषकस्यापि सत्कारं चकार। यतः—

हिन्दी-भाषा—अतः शुभ मुहूर्त में हम दोनों वहाँ चलें। तत्पश्चात् कौवा अपने मित्र मूषक के साथ विचित्र प्रकार से बातचीत करता हुआ सुख पूर्वक उस तालाब के निकट पहुँचा। तदनन्तर मन्थर ने दूर से ही अपने मित्र लघु पतनक को देखकर उसका यथोचित आतिथ्य सत्कार करके मूषक का भी आतिथ्य सत्कार किया। क्योंकि—

गुरुरग्निर्द्विजातीनां वर्णानां ब्राह्मणो गुरुः।
पतिरेको गुरुः स्त्रीणां सर्वस्याभ्यागतो गुरुः ॥

अन्वयः—अग्निः द्विजातीनां गुरुः, ब्राह्मणः वर्णानां गुरुः, पतिः स्त्रीणां गुरुः, अभ्यागतः सर्वस्य गुरुः (अस्ति।)

हिन्दी भाषा—अग्निदेव द्विजातियों के गुरु, ब्राह्मण वर्णों के गुरुः। पति स्त्रियों के और अतिथि सभी का गुरु है।

वायसोऽवदत्—'सखे मन्थर ! सविशेषपूजामस्मै विधेहि। यतोऽयं पुण्यकर्मणां धुरीणः कारुण्य रत्नाकरो हिरण्यकनामा मूषिकराजः इत्युक्त्वा चित्रग्रीवोपाख्यानं वर्णितवान्।

मन्थरः सादरं हिरण्यकं सम्पूज्याह—'भद्र यदि न रहस्यं तदाऽऽत्मनो निर्जनवमागमनकारणाख्यातुमर्हसि।
Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

हिरण्यकोऽवदत् सुहृद्योऽग्रे किं गोपनीयम्। तत्कथयामीति श्रूयताम्—

हिन्दी-भाषा—कौवे ने कहा—मित्र मन्थर, विशेष पूजा इनकी कीजिए, क्योंकि ये पुण्यात्माओं में अग्रणी, दया के समुद्र हिरण्यक नाम से प्रसिद्ध मूषक राज हैं—

ऐसा कहकर कौवे ने कपोत राज चित्रग्रीव की सम्पूर्ण कथा कही।

मन्थर ने आदरपूर्वक हिरण्यक की पूजा करके कहा कि हे भद्र, यदि कोई रहस्य की बात न हो, तो आप अपने निर्जन वन में निवास का कारण बतावें।

हिरण्यक ने कहा मित्र से गोपनीयता क्या? मैं कारण बता रहा हूँ, सुनिए—

मूषकपरिव्राजकस्य कथा

अस्ति चम्पकाभिधानायां नगर्यां परिव्राजकावसथः। तत्र चूडाकर्णो नाम परिव्राट् प्रतिवसति। सच भोजनावशिष्टभिक्षान्नसहितं भिक्षापात्रं नागदन्ते ऊर्ध्वस्थाप्य स्वपिति अहञ्च तदन्नमुत्प्लुत्योत्प्लुत्य प्रत्यहं भक्षयामि। अनन्तरं तस्य प्रियसुहृद्वीणाकर्णो नाम परिव्राजकः समायातः। तेन सह कथाप्रसंगावस्थितो मम त्रासार्थं जर्जरवंशखण्डेन चूडाकर्णो भूमिमताडयत्।

वीणाकर्ण उवाच—'सखे! किमिति मम कथा विरक्तोऽन्यासक्तो भवान्?

चूडाकर्णोनोक्तम्—मित्र! नाहं त्वत्कथा विरक्तः किन्तु पश्यायं मूषको ममापकारी सदा पात्रस्थं भिक्षान्नमुत्प्लुत्य भक्षयति।

वीणाकर्णो नागदन्तं विलोक्याह—कथं मूषकः स्वल्पबलोऽप्येतावद् दूरमुत्पतति? तदत्र मूषकबलोपष्टम्भे केनापि कारणेन भवितव्यम्। ततः विचिन्त्य क्षणं पुनः पुनस्तेनैवोक्तम्—'कारणञ्चात्र धनबाहुल्यमेव भविष्यति। यतः—

हिन्दी-भाषा—चम्पकावती नगर में संन्यासियों का का एक मठ है, जहाँ चूडाकर्ण नामक एक संन्यासी रहता था। वह भोजन के पश्चात् अवशिष्ट अन्न को पात्र में रखकर उसे खूँटी पर लटका कर सोता था और मैं प्रतिदिन कूद-कूद कर खाता था। एक दिन उसका प्रिय मित्र वीणाकर्ण उससे मिलने आया। उसके साथ बातचीत करते हुए चूणाकर्ण मुझे भयभीत करने के लिए पुराने बाँस के टुकड़े को पृथ्वी पर पटकने लगा। यह देखकर वीणाकर्ण ने कहा कि मित्र, आप मेरी बातों से विरक्त तथा अन्य बातों की ओर आसक्त मालूम होते हैं।

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

चूडाकर्ण ने कहा – मित्र, मैं तुम्हारी वार्त्ता से विरक्त नहीं हूँ, किन्तु देखो, मेरा अपकारी यह मूषक सदैव मेरे पात्र में रखे हुए अन्न को कूद-कूद कर खाता है।

वीणाकर्ण ने खूँटी को देखकर कहा कि मूषक अल्पबली होता हुआ भी इतना दूर कैसे कूदता है ? इसके बल की अधिकता में कोई कारण अवश्य होना चाहिए। तदनन्तर कुछ सोचकर वीणाकर्ण ने पुनः कहा —यहाँ धन ही कारण है। क्योंकि –

धनवान्बलवाँल्लोके सर्वः सर्वत्र सर्वदा।
प्रभुत्वं धर्ममूलं हि राज्ञामप्युपजायते॥

अन्वयः –लोके सर्वः धनवान् सर्वदा सर्वत्र बलवान् (भवति), हि राज्ञामपि प्रभुत्वं धनमूलमुपजायते।

हिन्दी-भाषा - सभी धनी पुरुष लोक में सर्वत्र और सदैव बलवान् होते हैं, क्योंकि राजाओं के भी प्रभु बनने में धन ही कारण होता है।

ततः खनित्रमादाय तेन विवरं खनित्वा चिरसञ्चितं ममधनं गृहीतम्। ततः प्रभृति निजशक्तिहीनः सत्त्वोत्साहरहितः स्वाहारमप्युत्पादयितुमक्षम, सत्रासं मन्दंमन्दमुपसर्पतश्चूडाकर्णेनावलोकितः। ततस्तेनोक्तम् —अहो स एवायं मूषको यो वित्तबलेन श्वस्तावद् दूरमुत्पतति स्म, अद्य धनाभावेन गन्तुमप्यसमर्थः। साधूक्तं केनचित्—

हिन्दी-भाषा—तदनन्तर उस संन्यासी ने खनित्री (भूमि खोदने वाला हथियार) लेकर मेरा बिल खोदकर बहुत दिनों का सञ्चित मेरा धन निकाल लिया। तत्पश्चात् मैं शक्तिहीन तथा उत्साह रहित होकर अपना आहार उपार्जित करने में असमर्थ हो गया। एक दिन मुझे धीरे-धीरे चलते हुए देखकर चूडाकर्ण ने कहा—यह वही मूषक है, जो कल धन के बल से ऊपर उछलता था, आज धनाभाव के कारण चलने में भी असमर्थ हो गया है। किसी ने ठीक ही कहा है—

यस्यार्थस्तस्य मित्राणि पस्यार्थास्तस्य बान्धवाः।
यस्यार्थः स पुमाँल्लोके यस्यार्थः स हि पण्डितः॥

अन्वयः—लोके यस्य अर्थाः तस्य मित्राणि, यस्य अर्थाः तस्य बान्धवाः यस्य अर्थः स, पुमान्, यस्यार्थाः स हि पण्डितः (अस्ति)

CC-O. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

हिन्दी भाषा—संसार में जिसके पास धन है, उसी के मित्र होते हैं, उसी के बन्धु-बान्धव होते हैं। जिसके पास धन है, वही मनुष्य है, वही पण्डित है।

तानीन्द्रियाण्यविकलानि तदेव नाम,
सा बुद्धिरप्रतिहता वचनं तदेव।
अर्थोष्मणा विरहितः पुरुषः स एव,
अन्यः क्षणेन भवतीति विचित्रमेतत्।

अन्वयः—अविकलानि तानि एव इन्द्रियाणि, तदेव नाम, सा एव अप्रतिहता बुद्धिः तदेव वचनम्, स एव पुरुषः अर्थोष्मणां विरहितः क्षणेन अन्यः भवति एतत् विचित्रम्।

कठिनशब्दार्थाः—अविकलानि = दोष रहितानि। अप्रतिहता—अकुण्ठिता। अर्थोष्मणा = धनोष्मणा।

हिन्दी-भाषा—दोष रहित वे ही इन्द्रियाँ है, उनके नाम भी वे ही है, वही अकुण्ठित बुद्धि, वे ही वचन सभी कुछ वही हैं, परन्तु धन की गर्मी निकल जाते के बाद (धन हीन हो जाने के बाद) मनुष्य क्षण मात्र में अन्य ही प्रकार का बन जाता है।

एतत्सर्वमाकर्ण्य रहसि मयाऽऽलोचितम्—यन्ममात्रावस्थायमयुक्तमिदानीम्। यच्चान्यस्मै एतद् वृतान्तकथनं तदप्यनुचितम्। यतः—

हिन्दी-भाषा—इस बात को सुनकर मैंने एकान्त में विचार किया कि अब इस स्थान पर रहना उचित नहीं है और दूसरों से यह वृत्तान्त कहना भी ठीक नहीं है क्योंकि—

अर्थनाशं मनस्तापं गृहे दुश्चरितानि च।
वञ्चनं चापमानञ्च मतिमान्न प्रकाशयेत्॥

अन्वयः—मतिमान् अर्थनाशं, मनस्तापं गृहे दुश्चरितानि च वञ्चनं च अपमानं च न प्रकाशयेत्।

हिन्दी-भाषा—बुद्धिमान् मनुष्य अपने धन का नाश, मन का दुख, गृह का दुश्चरित्र, किसी के द्वारा धोखा खाना तथा अपमानित होना—इन्हें प्रकाशित न करें।

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

ततोऽहं मन्दं मन्दमुप सर्पस्तेन वीणाकर्णेन जर्जरवंशखण्डेन ताडितस्तदालोच्चाहं निर्जनवनमागत. ततोऽस्मत्पुण्योदयादनेन मित्रेणाहं स्नेहावृत्याऽनुगृहीतः । अधुना च पुण्यपरम्परया भवदाश्रय स्वर्ग एव मया प्राप्तः ।

हिन्दी-भाषा--तदनन्तर मैं जब धीरे-धीरे जा रहा था, तब उस वीणाकर्ण ने पुराने बाँस के टुकड़े से मुझे मारा, मन में सोच कर निर्जर वन में आ गया ।

तत्पश्चात् मेरे पुण्यों के उदय से इस कौवे मित्र ने स्नेह को कृपा दृष्टि से मुझे अनुगृहीत किया और इस समय मैंने अपने पुण्य कर्मों की परम्परा से आपका आश्रय प्राप्त कर स्वर्ग प्राप्त कर लिया ।

इत्थं श्रुत्वा मन्थरेणोक्तम् – मित्र ! बहुज्ञे त्वयि किं स्वपाण्डित्यप्रकर्षप्रदर्शनेन, ममैव सहात्र स्थित्वा कालो नीयताम् । इति श्रुत्वा लघुपतनको ब्रूते – धन्योऽसि मित्र मन्थर ! सर्वथा श्लाघ्यगुणोऽसि ।

हिन्दी-भाषा—यह सुनकर मन्थर ने कहा कि मित्र, आप बहुज्ञ हैं । मैं आपके सामने क्या पाण्डित्य प्रकाशित करूँ । आप अब यहीं मेरे साथ रहकर अपना समय व्यतीत करें ।

यह सुनकर लघुपतनक ने कहा—मित्र मन्थर, तुम धन्य हो और सदैव प्रशंसित गुण वाले हो ।

तदेवं ते स्वच्छाहारविहारं कुर्वाणाः सन्तुष्टाः सुखं निवसन्ति स्म ।

अथ कदाचिच्चित्राङ्गनामा मृगः केनापि त्रासितस्तत्रागत्य मिलितः ।

ततः पश्चादायान्तं मृगमालोक्य भयं सञ्चित्य मन्थरो जलं प्रविष्टः, मुषकश्च बिवरं गतः, काकोडीय वृक्षमारूढः ।

ततो लघुपतनकेनं सुदूरं निरूप्य 'भयहेतुर्न कोऽप्यायातीत्यालोचितम् ।' पश्चात्तद्वचनादागत्य पुनः सर्वे मिलित्वा तत्रैवोपविष्टाः ।

मन्थरेणोक्तम् – 'भद्र मृग ! स्वागतं ते । स्वेच्छयोदकाद्याहारोऽनुभूयताम । अत्रावस्थानेन च वनमिदं सनाथीक्रियताम् ।'

चित्राङ्गो ब्रूते – लुब्धकत्रासितोऽहं भवतां शरणामागतो भवद्भिः सह सख्यमिच्छामि ।

हिरण्यकोऽब्रवीत् –मित्रत्वं तादृक्समैः सह भवता प्रयत्नेन विनैव लब्धम् ।

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

हिन्दी-भाषा—इस प्रकार वे सभी स्वेच्छापूर्वक आहार-विहार करते हुए अपना समय व्यतीत करने लगे। एक दिन चित्राङ्ग नामक मृग किसी से त्रसित होकर वहाँ आया। तत्पश्चात् उस मृग को देखकर मन में भय की आशंका करके मन्थर जल में, मूषक बिल में तथा कौवा वृक्ष पर चला गया। कौवे ने दूर तक देखा—भय का कोई कारण नहीं दृष्टिगत हुआ। तदनन्तर उसके कथनानुसार सभी एक स्थान पर एकत्रित हुए।

मत्थर ने मृग से कहा—भाई मृग, आपका स्वागत है, स्वेच्छापूर्वक जल तथा भोजन आदि ग्रहण करें तथा यहाँ रहकर इस वन को सनाथ करें।

चित्राङ्ग मृग ने कहा कि व्याध के डर से भाग कर मैं आप लोगों के शरण में आकर मैत्री चाहता हूँ।

हिरण्यक ने कहा—आपने तो हम लोगों के साथ मैत्री विना प्रयत्न से ही प्राप्त कर ली।

औरसं कृतसम्बन्धं तथा वंशक्रमागतम्।
रक्षितं व्यसनेभ्यश्च मित्रं ज्ञेयं चतुर्विधम्।

अन्वयः—औरसं, कृतसम्बन्धम् वंशक्रमागतम् तथा व्यसनेभ्यः रक्षितम्—इति चतुर्विधं मित्रम् ज्ञेयम्।

हिन्दी-भाषा—सहोदर भाई सम्बन्धी, वंशपरम्परा से प्राप्त तथा विपत्ति से रक्षा करने वाला—ये चार प्रकार के मित्र कहे जाते हैं।

तदत्र भवता स्वगृहनिर्विशेषं स्थीयताम्। तत् श्रुत्वा मृगः सानन्दो भूत्वा स्वेच्छाहारं कृत्वा पानीयं पीत्वा जलसन्नतरुछायायामुपविष्टः।

अथ मन्थरेणोक्तम्—'सखे मृग! एतास्मिन्निर्जने वने केन त्रासितोऽसि? कदाचित् किं व्याधाः सञ्चरन्ति?

मृगेणोक्तम्—अस्ति कलिङ्गविषये रुक्माङ्गदो नाम नरपतिः। स च दिग्विजयव्यापारक्रमेणगत्व चन्द्रभागानदीतीरे समवासितकटको वर्तते। प्रातश्च तेनागत्य कर्पूरसरः समीपे भवितव्यमिति व्याधानां मुखात्किंवदन्ती श्रूयते। तदत्रापि प्रातरवरस्थानं भयहेतुकमित्यालोच्य यथावसरं कार्यमारभ्यताम।

कूर्मः सभयमाह—'जलाशयान्तरे गच्छामि।' काकमृगावप्युक्तवन्तौ—'एवमस्तु।'

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

ततो हिरण्यको विहस्याह —जलाशयान्तरे प्राप्ते तु मन्थरस्य कुशलम् किन्तु स्थले गच्छतः कः प्रतिकारः ? अतोऽत्र कोऽप्युपायश्चिन्त्यताम्। यथा चोक्तम् —

हिन्दी-भाषा—अतः आप यहाँ अपने घर के समान रहें। हिरण्यक की बात सुनकर वह मृग आनन्द पूर्वक इच्छानुसार भोजन तथा जल प्राप्त कर सरोवर के निकट वृक्ष की छाया में बैठ गया।

तदनन्तर मन्थर ने कहा—मित्र मृग, तुम इस निर्जन वन में किससे भयभीत हुए हो ? क्या यहाँ व्याध भ्रमण करते हैं ? मृग ने कहा—कलिङ्ग देश में रुक्माङ्गद नामक एक राजा है। वह दिग्विजय की कामना से चन्द्र-भागा नदी के किनारे अपनी सेना के साथ ठहरा हुआ है। प्रातः काल वह यहाँ कर्पूर सरोवर के निकट आ जायेगा—ऐसी किं वदन्ती व्याधों के मुख से सुनी गई है। अतः यहाँ भी प्रातः काल निवास करना भय का कारण समझ कर यथोचित कार्य करना चाहिए। यह सुनकर भयभीत कच्छप ने कहा मैं दूसरे जलाशय में जाता हूँ।

कौवा तथा मृग दोनों बोले—'ऐसा ही हो।'

तत्पश्चात् हिरण्यक ने हसकर कहा कि दूसरे जल शय जाने में मन्थर का कुशल तो है, पर स्थल मार्ग पर जाते हुए उसकी रक्षा कैसे होगी ? अतः इस सम्बन्ध में कोई उपाय सोचना चाहिए। जैसा कि कहा गया है—

उपायेन हि यच्छक्यं न तच्छक्यं पराक्रमैः।
शृगालेन हतो हस्ती गच्छता पङ्कवर्त्मना॥

अन्वयः—उपायेन हि यच्छक्यम् तत् पराक्रमैः न शक्यम्, शृगालेन पङ्कवर्त्मना गच्छता हस्ती हतः।

हिन्दी-भाषा—उपाय के द्वारा जो कार्य सिद्ध हो सकता है, वह पराक्रम के द्वारा नहीं, जैसे शृगाल ने पंक में फँसे हुए हाथी को मार डाला।

तावाहतुः—कथमेतत् ?

हिरण्यकः कथयति।

हिन्दी-भाषा—दोनों ने पूछा—यह कैसे ? हिरण्यक कहता है।

CC-O. Vidyabharathi Book Centre, Chennai

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

हस्ति-धूर्तशृगालस्य कथा

अस्ति ब्रह्मारण्ये कर्पूरतिलको नाम हस्ती । तमवलोक्य सर्वे शृगालाश्चिन्तयन्ति स्म - अद्ययं केनोपायेन म्रियते, तदाऽस्माकमेतद्देहेन मासचतुष्टयस्य भोजनं भविष्यति । तत्रैकेन वृद्धशृगालेन प्रतिज्ञातम्—'मया बुद्धिप्रभावादस्य मरणं साधयितव्यम् ।'

अनन्तरं स वञ्चकः कर्पूरतिलकसमीपं गत्वा साष्टाङ्गपातं प्रणम्योवाच—'देव ! दृष्टिप्रसादं कुरु ।'

हस्ती ब्रूते—'कस्त्वम् ? कुतः समायातः ?

सो ऽवदत्—जम्बुकोऽहम । सर्वै वनवासिभिः मिलित्वा भवत्सकाशं प्रस्थापितः । यद्विना राज्ञाऽवस्थातुं न युक्तं तद्याटविराज्येऽभिषेक्तुं भवान् सर्वगुणोपेतो निरूपितः ।

हिन्दी-भाषा—ब्रह्मारण्य में कर्पूर तिलक नामक एक हाथी रहता था । उसे देखकर शृगालों ने सोचा कि यदि यह किसी उपाय से मर जाता, तो इसके शरीर से हम लोगों के लिए चार मास का भोजन मिल जाता । उनमें से एक वृद्ध शृगाल ने प्रतिज्ञा की कि 'मैं अपनी बुद्धि के प्रभाव से इसे मारूँगा । तदनन्तर वह धूर्त शृगाल, कर्पूर तिलक हस्ति के निकट जाकर उसे साष्टाङ्ग प्रणाम करके बोला—देव, मेरे ऊपर कृपा दृष्टि करें ।

हाथी ने कहा—तुम कौन हो ? कहाँ से आये हो ?

उसने कहा—मैं शृगाल हूँ । वन के सभी पशुओं ने मिलकर मुझे आपके निकट भेजा है और कहा है कि वन में राजा के विना रहना ठीक नहीं है । अतः सर्व गुण सम्पन्न आपको ही वन का राजा बनाने के लिए चुना है ।

तद्यथा लग्नवेला न विचलति, तथा सत्वरमागम्यतां देवेत्युक्त्वोत्थाय चलितः । ततोऽसौ राज्यलोभाऽऽकृष्टः कर्पूरतिलकः शृगालवर्त्मना धावन्महापङ्के निमग्नः ।

ततस्तेन हस्तिनोक्तम्—'सखे शृगाल ! किमधुना विधेयम् । निपतितोऽहं म्रिये, परावर्त्य पश्य ।'

शृगालेन विहस्योक्तम्—'देव' मम पुच्छाग्रावलम्बनं कृत्वोत्तिष्ठ । यन्मम विधस्य वचसि प्रत्ययः कृतस्तदनुभूयतामशरणं दुखम् ।'

ततो महापङ्के निमग्नो हस्ती यथेच्छं शृगालैर्भक्षितः । अतोऽहं ब्रुवीमि—उपायेन हि यच्छक्यं न तच्छक्यं पराक्रमैः ।

CC-O. Vidyabharathi Research & Training Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

हिन्दी-भाषा-अतः राज्याभिषेक का मुहूर्त न टले, आप शीघ्रता से मेरे साथ चलें। इस प्रकार कथन के उपरान्त शृगाल आगे-आगे तथा कर्पूर तिलक हस्ति राज्य के लोभ के कारण उसके पीछे-पीछे चलता हुआ महापंक में फँस गया।

तदनन्तर उस हाथी ने कहा कि मित्र, शृगाल, अब क्या करना चाहिए। यहापंक में फँसकर मैं मरना चाहता हूँ। घूमकर मेरी ओर देखो।'

शृगाल ने हँसते हुए कहा—महाराज मेरी पूँछ के अग्र भाग को पकड़ कर बाहर निकल आवें। मेरे जैसे की बात पर आपने विश्वास किया। अतः दुख का अनुभव कीजिए, अब शरण देनेवाला कोई नहीं है।'

तदनन्तर शृगालों ने उस महापङ्क में फँसे हुए हाथी को अपनी इच्छानुसार भक्षण किया। इसीलिए मैं कहता हूँ कि उपाय से जो कार्य सिद्ध होता है, वह पराक्रम से नहीं।

तथापि तद्वितवचनमेवधीर्य महत्ता भयेन विमुग्ध इव तं जलाशयमुत्सृज्य मन्थरश्चलितः। तेऽपि हिरण्यकादयः स्नेहादनिष्टं शङ्कमाना मन्थरमनुगच्छन्ति स्म। ततः स्थले गच्छन् केनापि व्याधेन काननं पर्यटता मन्थरः प्राप्तः। प्राप्य च तं गृहीत्वोत्थाय धनुषि बध्वा भ्रमन् क्लेशात् क्षुत्पिपासाकुल स्वगृहाभिमुखं चलितः।

हिन्दी-भाषा—तत्पश्चात् उसके हितकर वचनों का अनादर करके महान् भयभीत मन्थर मूर्ख के समान उस सरोवर को छोड़कर चला। हिरण्यक इत्यादि मित्र भी उसके अनिष्ट की आशंका से उसके पीछे-पीछे चले। कुछ दूर जाने के बाद भूखे-प्यासे व्याध ने पृथ्वी पर चलते हुए मन्थर को देखा और उसे पकड़ कर अपने धनुष में बाँध कर अपने घर की ओर चला।

अथ मृगवायसमूषकाः परं विषादमुपगच्छन्तस्तमनुजग्मुः। ततो हिरण्यको विलपति

हिन्दी भाषा—यह देखकर मृग, कौवा तथा चूहा—तीनों बहुत ही दुखी हुए और उसके पीछे-पीछे चले। तदनन्तर हिरण्यक ने रोते हुए कहा—

एकस्य दुःखस्य न यावदन्तं
गच्छाम्यहं पारमिवार्णवस्य।
तावद् द्वितीयं समुपस्थितो मे
विशेषतश्चापदमप्रमेयम्॥

Sri Vidyabharati Foundation, New Delhi

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

अन्वयः – अहम् अर्णवस्य पारम् इव यावत् दुःखस्य अन्तं न गच्छामि, तावत् मे द्वितीयं समुपस्थितम्, छिद्रेषु अनर्था बहुलीभवन्ति ।

कठिनशब्दार्थाः – अर्णविस्य = समुद्रस्य । छिद्रेषु = विपत्तिसमयेषु ।

हिन्दी-भाषा – समुद्र के पार के समान जब तक एक दुःख का अन्त नहीं होने पाया, तब तक दूसरा दुःख उपस्थित हो गया । यह ठीक ही कहा गया है कि एक विपत्ति आने पर उसके साथ-साथ अनेक विपत्तियाँ भी आ जाती हैं ।

इति बहु विलप्य हिरण्यकश्चित्राङ्गलघुपतनकावाह–'यावदयं व्याधो बनान्न निस्सरति तावन्मन्थरं मोचयितुं यत्नः क्रियताम् ।

तावूचतुः –'सत्वरं कार्यमुच्यताम् ।'

हिरण्यको ब्रूते–चित्राङ्गो जलसमीपं गत्वा मृतमिवात्मानं दर्शयतु । काकश्च तस्योपरि स्थित्वा चञ्चुवा किमपि विलखतु । नूनमेव लुब्धकेन तत्र कच्छपं परित्यज्य मृगमांसार्थिना गन्तव्यम्' ततोऽहं मन्थरस्य बन्धनं छेत्स्यामि, सन्निहिते लुब्धके भवद्भ्यां सत्वरं पलायितव्यम् ।'

चित्राङ्गलघुपतकाभ्यां शीघ्रं गत्वा तथाऽनुष्ठिते सति स व्याधः श्रान्तं पानीयं पीत्वा तरोरधस्तादुपविष्टस्तथाविधं मृगमपश्यत् । ततः कर्त्तरिकामादाय प्रहृष्टमना मृगान्तिकं चलितः ।

अत्रान्तरे हिरण्यकेन गत्वा मन्थरस्य बन्धनं छिन्नम् । स कूर्मः सत्वरं जलाशयं प्रविवेश । मृगोऽपि आसन्नं तं व्याधं विलोक्य द्रुतमुत्थाय पलायितः । ततः प्रत्यावृत्य लुब्धको यावत्तरुतलमायाति, तावत कूर्ममसपश्यन्नचिन्तयत्–उचितमेवैतन्ममासमीक्ष्यकारिणः । यतः

हिन्दी-भाषा – हिरण्यक ने बहुत विलाप करके चित्राङ्ग मृग तथा लघुपतनक कौवे से कहा—जब तक यह व्याध इस वन से बाहर नहीं जाता है, तब तक मन्थर को मुक्त करने का प्रयत्न करना चाहिए ।

यह सुनकर उन दोनों ने कहा—शीघ्र कहिए क्या करना चाहिए ?

हिरण्यक ने कहा कि चित्राङ्ग जल के निकट जाकर अपने को मृतक के समान दिखावे और लघुपतनक उसके ऊपर बैठकर चोंच मारे । ऐसा करने पर निश्चित ही वह व्याध मृग के मांस के लोभ से कच्छप को छोड़कर इसके निकट आ जायेगा । उस समय मैं मन्थर के बन्धन को काट दूँगा और व्याध ज्योंही आप दोनों के समीप पहुँचे, वहाँ से शीघ्र भाग जाना ।

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

तत्पश्चात् चित्रांग नाम मृग तथा लघु पतनक काक ने वैसा ही किया, श्रान्त व्याध ने पानी पीकर वृक्ष के नीचे विश्राम करना चाहा, उसी समय मृत मृग को देखकर बहुत ही प्रसन्न हुआ और मन्थर को वहीं छोड़कर हाथ में कैंची लिये हुए मृग की ओर प्रस्थान किया। इसी बीच हिरण्यक नामक मूषक ने मन्थर के जाल को काट दिया जिससे वह शीघ्रता से सरोवर में प्रवेश कर गया। जब मृग ने अपने निकट व्याध को आते हुए देखा, तब वह भी उठकर शीघ्रता से भाग गया। तदनन्तर वह व्याध जब लौटकर वृक्ष के निकट आया, तब वहाँ कच्छप को न प्राप्त कर सोचने लगा—'बिना समझे काम करने वाले के लिए यह उचित ही है।' क्योंकि—

यो ध्रुवाणि परित्यज्य अध्रुवाणि निषेवते।
ध्रुवाणि तस्य नश्यन्ति अध्रुवं नष्टमेव हि॥

अन्वयः—यः ध्रुवाणि परित्यज्य अध्रुवाणि निषेवते, तस्य ध्रुवाणि नश्यन्ति हि अध्रुवं नष्टमेव।

हिन्दी-भाषा—जो निश्चित को छोड़कर अनिश्चित का सेवन करता है, उसकी निश्चित वस्तु नष्ट हो जाती है और अनिश्चित तो नष्ट ही है।

ततोऽसौ स्वकर्मवशान्निराशः कटकं प्रविष्टः। मन्थरादयश्च सर्वे विमुक्तापदः स्व-स्वस्थानं गत्वा सर्वसुखोपरणसमेताः सुखेन स्थिताः।

हिन्दी-भाषा तदनन्तर वह व्याध निराश होकर अपने स्थान पर आया और मन्थर इत्यादि सभी आपत्ति से छूटकर अपने-अपने स्थान पर सुखपूर्वक रहने लगे।

अव राजपुत्रैः सानन्दमुक्तम्—सर्वं श्रुतवन्तः सुखिनो वयम्। सर्वं सिद्धं नः समीहितम्।

विष्णुशर्मोवाच—एतावता भवतामभिलषितं सम्पन्नम्, अपरमपीदमस्तु—

हिन्दी-भाषा-यह सब कथा सुनकर राजपुत्रों ने आनन्दपूर्वक कहा कि हम लोगों ने मित्रलाभ की कथा सुनी, हम सभी सुखी हुए, हमारे मनोरथ पूर्ण हुए।

राजकुमारों की बात सुनकर विष्णु शर्मा ने कहा कि इस कथा से आप लोगों के मनोरथ पूर्ण हुए ही और भी होवे—

मित्रं प्राप्नुत सज्जनाः जनपदैर्लक्ष्मीः समालम्ब्यताम्।
भूपाला परिपालयन्तु वसुधां शश्वत्स्वधर्मे स्थिताः॥
आस्तां मानसतुष्टये सुकृतिनां नीतिर्नवोढेव वः।
कल्याणं कुरुतां जनस्य भगवांश्चन्द्रार्धचूड़ामणिः॥

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri

CC-O. In Public Domain. Digitized by eGangotri

मूल्य १०.००

भारतीय विद्या प्रकाशन
वाराणसी • दिल्ली

Sri Vidyabharathi Book Centre, Sringeri